एस.सी.ई.आर.टी., बिहार
द्वारा विकसित

S9-C

दो वर्षीय सेवापूर्व डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री एजुकेशन

सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र

(उच्च-प्राथमिक स्तर)

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् (एस.सी.ई.आर.टी.),
महेन्द्रू, पटना, बिहार

पाठ्य पुस्तक विकास समूह

पत्र–S-9.C

(सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र)

दिशाबोध	श्री दीपक कुमार सिंह, भा.प्र.से., अपर मुख्य सचिव, शिक्षा विभाग, बिहार, पटना श्री सज्जन राजसेकर, भा.प्र.से., निदेशक, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, महेन्द्रू, बिहार, पटना डॉ० एस.पी.सिन्हा, सलाहकार, शिक्षा विभाग, बिहार, पटना
समन्वयक	डॉ० वीर कुमारी कुजूर, विभाग प्रभारी, शिक्षणशास्त्र, पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं मूल्यांकन विभाग, एस.सी.ई.आर.टी, पटना
लेखक समूह	डॉ० मनोज कुमार वर्मा, पूर्व विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर शिक्षा विभाग, सी.टी.ई. तुर्की, मजफ्फरपुर
	डॉ० उपेन्द्र कुमार, प्रभारी प्राचार्य, पी.टी.ई.सी. मसौढ़ी, पटना
	डॉ० मनीषा प्रियम्बदा, व्याख्याता, डायट दिग्घी, वैशाली
	श्री हरेन्द्र राम, वरीय व्याख्याता, डायट नरार, मधुबनी
	श्री नीरज कुमार मौर्य , वरीय व्याख्याता, डायट फजलगंज, रोहतास
समीक्षक	श्री रवि आनंद प्रभारी प्राचार्य, बाईट मूसापुर, कटिहार
भाषा समीक्षक	श्रीमती आशा सिन्हा, व्याख्याता, बाईट मूसापुर, कटिहार

पाठ–सूची

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
1	सामाजिक विज्ञान की समझ	7-24
2	उच्च प्राथमिक स्तर सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें	25-37
3	सामाजिक विज्ञान का शिक्षण	38-63
4	सामाजिक विज्ञान में आकलन–मूल्यांकन	64-83
	संदर्भ सूची	84

सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र

बिहार सरकार

आमुख

उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान की विषय-वस्तु इतिहास, भूगोल, राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र से मिलती है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 ने सामाजिक विज्ञान को समाज में स्वतंत्रता, विश्वास, परस्पर सम्मान और विविधता के आधार जैसे मानवीय मूल्यों को सुदृढ़ आधार तैयार करने का ज्ञान स्रोत माना जाता है। अतः सामाजिक विज्ञान शिक्षण का लक्ष्य विद्यार्थियों में आलोचनात्मक, मानसिक और नैतिक क्षमता का विकास करना है, ताकि वे उन सामाजिक शक्तियों से सावधान रह सकें जो इन मूल्यों को खतरा पहुँचाती है। बिहार के कक्षा 6 से 8 के सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम को अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संदर्भ के अपेक्षित ज्ञान क्षेत्र के साथ-साथ विशेष तौर पर राज्य की क्षेत्रीय विशेषताओं, सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य, आर्थिक संदर्भ, गौरवशाली अतीत एवं वर्त्तमान शैक्षिक जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाया गया है। पाठ्यक्रम के विषय-वस्तुओं का प्रयोग जब शिक्षक रोचक एवं प्रभावी ढंग से करते हैं तभी उन अपेक्षित लक्ष्यों को कुशलतापूर्वक प्राप्त किया जा सकता है।

निदेशक

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना

सामाजिक विज्ञान की समझ

इकाई–1.1

- इकाई का परिचय
- सीखने के उद्देश्य
- पूर्व अनुभव
- सामाजिक विज्ञान की अवधारणा
- सामाजिक विज्ञान की प्रकृति
- सामाजिक विज्ञान के उद्देश्य
- सामाजिक विज्ञान का महत्व

ईकाई– 1.2

- सामाजिक विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 एवं बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2008 के संदर्भ में सामाजिक विज्ञान
- समेकन
- ई संसाधन
- मूल्यांकन
- परियोजना कार्य

इकाई–1

सामाजिक विज्ञान की समझ

इकाई–1.1

इकाई का परिचयः सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत समाज के विभिन्न क्रियाकलापों का समावेश होता है। मनुष्य अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक समाज में रहकर समाज से सहयोग प्राप्त करता है। संबंध की इस अनिवार्यता के कारण मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहा जाता है। उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान की विषय–वस्तु इतिहास, भूगोल, राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र से मिलती है। सामाजिक विज्ञान की भूमिका एक समता मूलक और शांति मूलक समाज का निर्माण करना है। इसके विषय–वस्तु का लक्ष्य जानी पहचानी दैनिक जीवन से जुड़ी हुई सामाजिक सच्चाई की समीक्षात्मक जांच तथा उस पर प्रश्न करते हुए विद्यार्थियों में आलोचनात्मक जागरूकता का विकास करना है। साथ–ही इस विषय में विद्यार्थियों के अपने जीवन संदर्भो के संबंध में नए आयामों और नए पहलुओं को समझने का भरपूर अवसर है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 एवं बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2008 में सामाजिक विज्ञान को समाज में स्वतंत्रता, विश्वास, परस्पर सम्मान और विविधता के आदर जैसे मानवीय मूल्यों को सुदृढ़ आधार तैयार करने का आधार स्रोत माना है। सामाजिक विज्ञान के शिक्षण का लक्ष्य विद्यार्थियों में आलोचनात्मक मानसिक और नैतिक क्षमता का विकास करना है, ताकि वे उन सामाजिक शक्तियों से सावधान रह सके जो उन मूल्यों को खतरा पहुँचाती है। इन सब बातों की समझ प्रशिक्षुओं को होनी चाहिए ताकि वे सामाजिक विज्ञान के शिक्षण को सार्थक रूप दे सकें। बिहार के कक्षा 6 से 8 के सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम को अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संदर्भ के अपेक्षित ज्ञान क्षेत्र के साथ–साथ विशेष तौर पर राज्य की क्षेत्रीय विशेषताओं और सामाजिक संस्कृति आर्थिक संदर्भ गौरवशाली अतीत एवं वर्तमान शैक्षिक जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाया गया है। लेकिन इस विषय का सकारात्मक प्रभाव बच्चों के ज्ञान एवं जीवन पर तभी पड़ सकता है, जब शिक्षक इसका शिक्षण रोचक एवं प्रभावशाली ढंग से करें। इस इकाई के माध्यम से प्रशिक्षण में यह नजरिया एवं समझ विकसित की जाएगी कि वे सामाजिक विज्ञान की प्रकृति उद्देश्य एवं महत्व को स्वयं समझ एवं समझा सकें तथा सामाजिक विज्ञान के प्रमुख क्षेत्रों की पहचान कर सकें। साथ–ही सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के शिक्षण को लेकर राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 एवं बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2008 में कही गई बातों को निम्नलिखित उदाहरणों द्वारा समझने का प्रयास किया जाएगा।

सीखने के उद्देश्य

- सामाजिक विज्ञान की अवधारणा को जान पाएंगे।
- सामाजिक विज्ञान की प्रकृति को जान पाएंगे।
- सामाजिक विज्ञान के उद्देश्य को जान पाएंगे।
- सामाजिक विज्ञान के महत्व को जान पाएंगे।
- सामाजिक विज्ञान के प्रमुख क्षेत्रों को पहचान पाएंगे।
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 एवं बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2008 के संदर्भ में सामाजिक विज्ञान के बारे में जान पाएंगे।

पूर्व अनुभव

छात्र समाज के विविध सरोकारों से परिचित होगा। समाज में रहते हुए विकास एवं अभिवृद्धि में एक–दूसरे के सहयोग से भी अवगत होगा। प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत आने वाले विषयों से भी परिचित होगा। छात्र यह भी जानते होंगे कि परिवार एवं समाज के सहयोग के बिना किसी भी रुप में व्यक्ति का विकास संभव नहीं है।

सामाजिक विज्ञान की अवधारणा

सामाजिक विज्ञान विषय का अध्ययन प्रारंभ में सर्वप्रथम संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ। इसका अर्थ होता है – मानवीय एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मानव एवं समाज के विकास का क्रमबद्ध अध्ययन यह एक ऐसा विषय है, जिसमें मानवीय संबंधों की विभिन्न दृष्टिकोण से चर्चा होती है। प्राचीन काल में समाज की संरचना सरल थी और उसकी समस्याएँ भी सरल ही हुआ करती थीं। व्यक्ति को सामाजिक समायोजन में विशेष परेशानियों एवं कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता था परंतु समय की गति के साथ–साथ समाज की समस्याएं भी जटिल होती गई। इन समस्याओं को विभिन्न दृष्टिकोण से समझने और इनके उचित समाधान के लिए सहयोग देने का प्रशिक्षण व्यक्ति को बचपन से ही प्राप्त होना चाहिए तभी वह समाज का उपयोगी सदस्य सिद्ध हो सकता है। यही कारण है कि स्कूली विषयों में सामाजिक विज्ञान अध्ययन को शामिल किया गया है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और मनुष्य का समाज से घनिष्ठ एवं अनिवार्य संबंध होता है। इस समाज में ही मनुष्य का जन्म विकास एवं अभिवृद्धि होती है। मनुष्य का जन्म और उन्नति समाज में रहकर एवं समाज के सहयोग से होती है। समाज की उन्नति भी मनुष्य के सहयोग के बिना संभव नहीं है इस प्रकार मनुष्य और समाज में गहरा संबंध होता है। संबंध की इस गहराई एवं अनिवार्यता के कारण ही मनुष्य को सामाजिक प्राणी की संज्ञा दी जाती है। मनुष्य और समाज में कौन सर्वोपरि है। इस विषय पर अनेक वाद विवाद होने के पश्चात अधिकांश विद्वानों ने इस बात का समर्थन किया कि दोनों एक–दूसरे का पूरक हैं, अर्थात एक सिक्के के दो पहलू की भांति हैं तथा एक–दूसरे की

अभिन्न अंग है। मानव विकास के लिए समाज अनेक गतिविधियों में भाग लेता है तथा इससे उत्पन्न विभिन्न समस्याओं एवं कठिनाइयों का समाधान भी करता है। मनुष्य में व्याप्त रूढ़ियों से प्रभावित भी होता है तथा उससे उबरने अथवा उसको समाप्त करने का प्रयास भी करता है। मानव समस्याओं से प्रेरित या प्रभावित होकर समाज की उन्नति एवं विकास के मार्ग में मौजूद अवरोध को समाप्त करने की कोशिश करता है। विकास के लिए नवीन दिशाओं के निर्धारण का भी प्रयास करता है। इस तरह मानव और समाज में आदान-प्रदान का क्रम चलता रहता है। यह क्रम आदि काल जब से इस सृष्टि में मानव का उद्‌भव एवं विकास हुआ था तभी से चला आ रहा है। आधुनिक सभ्यता संस्कृति विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का विकास वस्तुतः इसी क्रम का परिणाम है। समाज में व्यक्ति को विकास की ओर अग्रसर करने का प्रमुख साधन विद्यालय है शैक्षिक संस्थान (विद्यालय) एक ऐसी सामाजिक संस्था है जिसके माध्यम से व्यक्ति समाज में व्याप्त कठिनाइयों एवं चुनौतियों का ज्ञान प्राप्त कर उसका सामना करता है। शैक्षिक संस्थान के माध्यम से ही उसे अपने आप को सामाजिक वातावरण में समायोजित करने की शिक्षा प्राप्त होती है। साथ-ही सामाजिक कठिनाइयों चुनौतियां एवं समस्याओं को समाधान करने की क्षमता एवं प्रेरणा प्राप्त होती है। अतः कह सकते हैं कि व्यक्ति के समाजीकरण का महत्वपूर्ण साधन शैक्षिक संस्थान (विद्यालय) है।

शैक्षिक संस्थानों में भाषा विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान विषयों की शिक्षा दी जाती है। इनमें सामाजिक विज्ञान एक ऐसा समूह है जिसकी विषय सामग्री मुख्यतः इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र से ली गई है। समाजशास्त्र की विषय-वस्तु इन सभी विषयों के साथ अंतरसंबंधित है। उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान विषय का प्रमुख उद्देश्य अपने आसपास में होने वाली विभिन्न घटनाओं को विस्तार से समझना है। अपेक्षित है कि इस विषय के अंतर्गत बच्चों को विभिन्न क्षेत्रों और संस्कृतियों में रहने वाले लोगों और उसकी सामाजिक कृतियों से परिचित कराया जाए। सामाजिक विज्ञान की एक महत्वपूर्ण भूमिका बच्चों में करुणा, सहानुभूति, विश्वास, शांति, सहयोग, सामाजिक न्याय, पर्यावरण संरक्षण जैसे अन्य मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदना जगाना है। शैक्षिक संस्थानों की शिक्षा के साथ-साथ अपने-अपने परिवार अपने सामाजिक वातावरण के विभिन्न भौगोलिक ऐतिहासिक सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक कार्यो के साथ अंत:क्रिया द्वारा विकसित होता है। सामाजिक विज्ञान विषय के माध्यम से बच्चों को विकास की गतिशीलता से परिचित कराना आवश्यक है, ताकि उनमें अन्य विषयों से उनका जुड़ाव को स्वतंत्र रूप से समझने की क्षमता पर्याप्त जागरूकता और आवश्यक कौशलों का विकास हो सके। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सामाजिक विज्ञान की अवधारणा में मानव जीवन का अध्ययन, सामाजिक संबंधों का अध्ययन, क्षेत्रीय अध्ययन, शिक्षा की आधुनिक विचारधारा, एक अंतर वैयक्तिक अध्ययन, शिक्षण के लिए नवीन आधार, आधुनिक सभ्यता का अध्ययन, भौगोलिक एवं सामाजिक वातावरण का अध्ययन भी सम्मिलित है।

सामाजिक विज्ञान की प्रकृति

परम्परागत रूप से इसे सामाजिक मामलों का विस्तृत विवरण माना गया है लेकिन आज इसे वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। वर्तमान में इसमें वैज्ञानिक और तार्किक तरीकों को भी शामिल किया गया है सामाजिक विज्ञान की शिक्षण–प्रक्रिया में इसे शामिल किया गया है इसके अंतर्गत सामाजिक विज्ञान की संकल्पना, विकास का क्रम, परिवार एवं समाज के प्रति बच्चों की समझ, समाज की तत्कालिक स्थिति, सामाजिक विज्ञान के घटक एवं संस्कृति के बारे में समझ विकसित किया जाता है।

सामाजिक विज्ञान का शाब्दिक अर्थ है – ''समाज का अध्ययन''। यह अंग्रेजी भाषा के शब्द ***सोशल साइंस*** का हिंदी रूपांतरण है जो दो शब्दों सोशल और साइंस से मिलकर बना है। सोशल का अर्थ है – मानव का उसके सामाजिक परिवेश में अध्ययन करना और साइंस का अर्थ है – मानव का उसके परिवेश में क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित अध्ययन करना। इस प्रकार सामाजिक विज्ञान से अभिप्राय उस विज्ञान से है, जिसमें मानवीय क्रियाएं एवं व्यवहारों उनके सामाजिक परिवेश में क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक विज्ञान की प्रकृति को निम्नांकित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है:–

1. सामाजिक विज्ञान एक कला है– सामाजिक विज्ञान को कुछ विद्वान कला मानते हैं। उनका मानना है कि सामाजिक विज्ञान में सभी सामाजिक अध्ययन की भारतीय उद्देश्यों का निर्धारण होता है। इसके नियम एवं साधन निश्चित किए जाते हैं और व्यावहारिकता का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इस आधार पर सामाजिक विज्ञान मानव का सभी दृष्टिकोण से अध्ययन करता है। सामाजिक विज्ञान जिन सामाजिक विज्ञानों (इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र) से विषय सामग्री ग्रहण करता है, उनका संबंध भी मानवीय व्यवहार, मानवीय संबंधों, मानवीय संस्थाओं एवं मानवीय वातावरण से होता है। इस प्रकार सामाजिक व्यवहार एवं संबंधों को सरल, सुबोध एवं स्पष्ट ढंग से प्रस्तुत किया जाना कला के समान है।

2. सामाजिक विज्ञान एक विज्ञान है – सामाजिक विज्ञान को कुछ विद्वान विज्ञान मानते हैं क्योंकि सामाजिक के अंतर्गत विविध घटनाओं, शासन सत्ता से संबंधित तथ्य, ऐतिहासिक तथ्यों एवं घटनाओं, भौगोलिक तथ्यों, प्राकृतिक घटनाओं जैसे भूकंप, ज्वालामुखी, पृथ्वी की आंतरिक एवं बाह्य शक्तियों आदि का अध्ययन एवं संकलन वैज्ञानिक प्रविधि से किया जाता है। इसके साथ–ही राजनीतिक समस्याएँ, क्रांतियाँ आदि से संबंधित तथ्यों आर्थिक समस्या, बेरोजगारी, निर्धनता, भूखमरी, मांग–पूर्ति, उत्पत्ति, ह्मस नियम आदि आर्थिक नियमों से संबंधित तथ्यों का संकलन किया जाता है। तत्पश्चात् भविष्य हेतु भविष्यवाणी की जाती है, परंतु यह भविष्यवाणी भौतिक विज्ञान की भांति निश्चित होती है। फिर भी सामाजिक विज्ञान को एक विज्ञान माना जाता है।

3. सामाजिक विज्ञान कला एवं विज्ञान दोनों है – सामाजिक विज्ञान मुख्यत: मानव का अध्ययन करता है, जो विश्व के विभिन्न भागों में निवासी व्यक्तियों के जीवन और संस्कृति से संबंध जोड़ता है। ऐसा ज्ञान, अनुभव एवं सोच प्रदान करता है, जिसके चारों ओर सभी विषयों को समन्वित किया जाता है। इसी आधार पर अधिकांश विद्वान यह स्वीकार करते हैं कि सामाजिक विज्ञान कला एवं विज्ञान दोनों है। सामाजिक विज्ञान में तथ्यों का विश्लेषण एवं संश्लेषण किया जाता है तथा कार्य करने की विधि एवं कार्य प्रणाली का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक विज्ञान तथ्यों के कारण एवं परिणाम का संबंध स्पष्ट करता है और साथ-ही सामान्यीकरण करता है और व्यावहारिकता का ज्ञान प्रदान करता है। अत: इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि सामाजिक विज्ञान कला एवं विज्ञान दोनों है।

4. भौतिक एवं सामाजिक वातावरण का अध्ययन – सामाजिक विज्ञान एक ऐसा विषय है, जिसमें मानव के भौतिक एवं सामाजिक वातावरण का अध्ययन क्रमबद्ध एवं विस्तृत रूप से करता है। यह मानव के वातावरण का अध्ययन करके उसके वातावरण के साथ अंतर्संबंध का क्रमबद्ध अध्ययन करता है। एन.सी.ई.आर.टी. के अनुसार सामाजिक विज्ञान मानव एवं भौतिक तथा सामाजिक वातावरण के प्रति उनकी पारस्परिक अंत:क्रिया से संबंधित है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक विज्ञान में मानव की उसके भौतिक एवं सामाजिक वातावरण की पारस्परिक अंत:क्रिया का विस्तृत एवं क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है और उसके साथ साथ अंतर्संबंध का ज्ञान प्राप्त किया जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक विज्ञान की प्रकृति मूल रूप से मानव का अध्ययन है जो मानव को विश्व के अन्य भागों में निवासी व्यक्ति की संस्कृति सभ्यता एवं उसके वातावरण का ज्ञान प्रदान करके उनके बीच अंतर्संबंध स्थापित करता है। ऐसा ज्ञान अनुभव सोच एवं अंर्तदृष्टि को उत्पन्न करता है जिसके द्वारा चारों ओर व्याप्त सभी विषयों को समन्वित किया जा सके। सामाजिक विज्ञान ऐसा विषय है जो क्षेत्र देश और विश्व शक्ति एवं राष्ट्रीयता की भावना का विकास करता है। यह जनतांत्रिक नागरिकता का विकास करता है।

सामाजिक विज्ञान के उद्देश्य

किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए उद्देश्य का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। उद्देश्य कार्य को उचित दिशा एवं व्यवस्था प्रदान करते हैं। वह कार्य व्यर्थ होता है जिसमें उत्साह एवं रुचि न हो और उत्साह एवं रुचि के लिए कार्य का उद्देश्यपूर्ण होना अनिवार्य है। लक्ष्यविहीन कार्य में समय एवं शक्ति का दुरुपयोग होता है जबकि लक्ष्य पूर्ण कार्य में समय व शक्ति का सदुपयोग होता है। किसी भी कार्य को करने के पश्चात व्यक्ति जानना चाहता है कि उसे कहाँ तक सफलता मिली और यह तभी संभव हो सकता है जबकि उसके द्वारा किए गए कार्य का कोई निश्चित लक्ष्य हो।

बी.डी. भाटिया के अनुसार – ''लक्ष्य के ज्ञान के अभाव में शिक्षक उस नाविक के समान है जो अपने साध्य या मंजिल को नहीं जानता और बालक उस पतवार विहीन नौका के समान है जो लहरों के थपेड़े खाकर किसी तट पर जा लगेगी''।

उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं

1. **सामाजिक एवं भौतिक वातावरण का ज्ञान** – उच्च प्राथमिक स्तर पर बच्चों को यह ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए कि व्यक्ति को अपने बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने सामाजिक एवं भौतिक वातावरण पर पर्याप्त रूप से निर्भर रहना पड़ता है। मनुष्य की क्रियाएँ इसी वातावरण के साथ जुड़ी रहती है।
2. विभिन्न भौतिक साधनों का ज्ञान उच्च प्राथमिक स्तर पर ही बच्चों को उन बौद्धिक साधनों का ज्ञान प्रदान करना चाहिए जिनके सतत् प्रयोग से मनुष्य जीवन को संभव बना पाया है। उन्हें ज्ञान दिया जाना चाहिए कि धरती, पानी, मिट्टी, वन, पहाड़, वनस्पतियाँ, खनिज पदार्थ आदि विभिन्न प्राकृतिक साधनों का जीवन के लिए कितना महत्व है। इनका महत्व आत्मसात कर लेने पर ही उन्हें इस साधनों के संरक्षण तथा इनके उचित प्रयोग की ओर अग्रसर किया जा सकता है।
3. **समाज के प्रति अपनत्व–भावना का निर्माण** – बच्चा घर से स्कूल में आता है। अपने माता–पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ रहते हुए उसे सामाजिक जीवन की कुछ–कुछ अनुभूति हो चुकी होती है। इसी अनुभूति को आधार मानते हुए उसे बताना चाहिए कि मनुष्य एक सामाजिक जीव है। समाज परिवार तक सीमित नहीं होता। गली, मोहल्ला, गांव, शहर आदि मानव समाज की विस्तृत होती हुई सीमाएं हैं। समाज के प्रति व्यक्ति के कुछ कर्तव्य है जिनके पालन में समाज का ही नहीं बल्कि व्यक्ति का भी हित निहित है। इस प्रकार बच्चों में समाज के प्रति अपनत्व–भावना का निर्माण करना चाहिए।
4. **समृद्ध एवं संयुक्त संस्कृति की भावना** – बचपन में विद्यार्थियों को बता देना चाहिए कि भारत समृद्ध एवं संयुक्त संस्कृति का देश है। इसे समृद्ध बनाने में विभिन्न धाराओं तथा विचारों ने अपना योगदान दिया है। अपनी संस्कृति को समझने के लिए इन विविधताओं का ज्ञान प्राप्त करना अत्यंत आवश्यक है। भारतीय संस्कृति के प्रति दिए गए यह संस्कार विद्यार्थियों को भारत की आत्मा को समझने में सहायता प्रदान करेंगे।
5. **श्रम के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण** – उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों को यह अनुभव कराना चाहिए कि प्राकृतिक साधनों से मानवीय श्रम के बिना वांछित लाभ नहीं उठाए जा सकते। श्रम से ही सुख और समृद्धि के अंकुर फूटते हैं। अतः श्रम के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। धर्म के प्रति आस्था उन्हें आगे चलकर श्रम करने के लिए प्रेरित करेगी।

6. **लोकतंत्र एवं सामाजिक समता की भावना** – विद्यार्थियों को बचपन से ही लोकतंत्रात्मक मूल्यों तथा सामाजिक समता के लिए तैयार करना चाहिए। उन्हें अवगत कराना चाहिए कि भारत एक लोकतंत्रात्मक देश है जहां रंग, लिंग, जाति, वर्ग, धर्म आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं है। परस्पर सहयोग सद्भावना तथा उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार से न केवल हम अपने जीवन को सुखी बना सकते हैं बल्कि समूचे राष्ट्र को भी उन्नति और समृद्धि के मार्ग पर अग्रसर कर सकते हैं।
7. **राष्ट्रीय भावना का निर्माण** – उच्च प्राथमिक स्तर पर ही बच्चों में राष्ट्रीय भावना के संस्कार डालना चाहिए। उनके मन में राष्ट्रीयता की उचित धारणा की छाप बिठानी चाहिए। उन्हें अवगत कराना चाहिए कि भारत विभिन्नताओं तथा विविधताओं का देश है। इसमें विभिन्न भाषाएँ बोली जाती है। लोगों के पहनावें तथा रीति-रिवाजों में अंतर हैं। यहाँ धार्मिक मत-मतान्तर भी अनेक है, परंतु इन तमाम विविधताओं के बावजूद भारत एक राष्ट्र है और भेद-भाव से ऊपर उठकर राष्ट्र की सेवा करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। अनेकता में एकता की भावना का निर्माण उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर पर ही होना चाहिए।

उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों को सामाजिक विज्ञान अध्ययन के अंतर्गत मुख्यतः निम्नलिखित तथ्यों का ज्ञान कराना आवश्यक है-

- भारत का भौतिक विभाजन, प्राकृतिक साधन।
- भारत के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों के जीवन से संबंधित तथ्य।
- भारत के विभिन्न भागों में प्रचलित उत्सव और त्योहार।
- ग्लोब तथा विश्व के मानचित्र का परिचय।
- भारत की परंपरा से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण तथ्य - जैसे प्रसिद्ध स्मारक, संगीत, नृत्य, धर्म, मेले एवं त्यौहार।
- भारत के विभिन्न भागों को मिलाने वाले यातायात तथा संचार के साधन।
- विश्व की महान विभूतियों का संक्षिप्त परिचय, जैसे - बुद्ध, अशोक, सुकरात, अब्राहम लिंकन, लेनिन, टॉलस्टॉय, महात्मा गांधी, कोलंबस, गैलीलियो, न्यूटन इत्यादि।
- विश्व की मुख्य संस्थाओं का संक्षिप्त परिचय, जैसे - संयुक्त विश्व संघ, यूनिसेफ, विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनेस्को इत्यादि।
- विश्व के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों के जीवन की विशेषताएं।
- भारत के महापुरुषों से संबंधित प्रसिद्ध गाथाएं।
- विभिन्न स्तरों- गाँव, जिला, राज्य, देश पर प्रशासन विधि का परिचय।

सामाजिक विज्ञान का महत्व

स्वतंत्रता से पूर्व शिक्षा पूर्णतया पुस्तकीय तथा सूचनात्मक थी। शिक्षा मूल रूप से जीविकोपार्जन के उद्देश्य से प्रभावित थी। परिणामस्वरूप केवल भाषा, गणित तथा भौतिक विज्ञान की शिक्षा को महत्व प्रदान किया जाता था। सामाजिक विषयों की उपेक्षा की जाती थी क्योंकि उनका कोई व्यावसायिक महत्व नहीं था। आज के युग में सामाजिक अध्ययन के विषयों को महत्वपूर्ण माना जाता है। सामाजिक अध्ययन की शिक्षा के महत्व को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:-

1. सामाजिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व और,
2. वैयक्तिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व।

1. सामाजिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व

सामाजिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व निम्नलिखित कारणों से है:-

- सामाजिक अध्ययन विद्यार्थियों में स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक है।
- सामाजिक अध्ययन देश की विरासत तथा संस्कृति के लिए प्रेम तथा सम्मान एवं श्रद्धा जागृत करता है।
- यह सहयोगी भावना विकसित करता है।
- यह समाज की प्रगति के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।
- सामाजिक अध्ययन समाज में एकरूपता तथा दृढ़ता लाने में सहायता प्रदान करता है।
- सामाजिक अध्ययन सामाजिक जागरूकता तथा अंतरराष्ट्रीय सद्भावना के विकास में सहायक है।
- यह सामाजिक जीवन को उन्नत, सफल तथा समृद्ध बनाने में परम उपयोगी है ।
- यह साथियों के लिए सहिष्णुता सहानुभूति तथा प्रेम की भावना विकसित करता है।
- सामाजिक अध्ययन समीक्षात्मक चिंतन की भावना विकसित करके पूर्ण जीवनयापन में सहायता देता है।
- सामाजिक अध्ययन पूर्व द्वेषों एवं पूर्वाग्रहों को दूर करके व्यापक दृष्टिकोण के विकास में सहायता प्रदान करता है।

2. वैयक्तिक दृष्टि से सामाजिक विज्ञान अध्ययन का महत्व

वैयक्तिक दृष्टि से इस अध्ययन के निम्नलिखित महत्व प्रस्तुत किए जा सकते हैं:-

- सामाजिक चरित्र का निर्माण इसके अध्ययन द्वारा व्यक्ति में विभिन्न सामाजिक गुणों का विकास किया जाता है। सहयोग, सहकारिता, सहिष्णुता, निष्पक्षता आदि ये गुण सामाजिक चरित्र के निर्माण में आधार का कार्य करते हैं।
- विभिन्न सामाजिक आदतों तथा कुशलताओं का विकास किया जाता है।
- व्यक्ति की मानसिक शक्तियों का विकास किया जाता है।
- व्यवहारिक समस्याओं के समाधान के लिए तैयार किया जाता है ।
- व्यक्ति को अपने वातावरण में व्यवस्थित होने के लिए समर्थ बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त उसमे स्वयं को अपनी आवश्यकताओं के अनुकूल बनाने की क्षमता प्रदान की जाती है।

इकाई– 1.2

सामाजिक विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र

सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के अर्थ, प्रकृति, एवं उसके सामाजिक विज्ञानों से अंतर संबंधी विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसमें इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र इत्यादि। सामाजिक विज्ञानों से विषय–वस्तु ली जाती है। साथ–ही, इसमें आधुनिक समस्याओं, तत्कालीन घटनाओं तथा समसामयिक घटनाओं को भी स्थान प्रदान किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक अध्ययन मानव जीवन के किसी विशेष पक्ष का विवेचन न करके उसकी संपूर्णता का वर्णन करता है।

इसमें मानव के नागरिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि सभी तत्वों का विवेचन किया जाता है। साथ–ही, सामाजिक अध्ययन मनुष्य के सामाजिक एवं भौतिक वातावरण का विवेचन करके उसकी अन्योन्याश्रितता को भी स्पष्ट करता है। वस्तुतः सामाजिक अध्ययन का बढ़ता हुआ क्षेत्र है। इस क्षेत्र में दिन–प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। **निकलसन राइट के अनुसार**, ‘‘वस्तुतः इसका क्षेत्र अत्यंत व्यापक है और संपूर्ण विश्व में मानव का वर्तमान सामाजिक जीवन ही इसका मूल है।‘‘

आधुनिक विचारधारा के अनुसार अब सामाजिक विज्ञान अध्ययन के अंतर्गत न केवल सामाजिक विज्ञानों की प्रचलित एवं संगठित सामग्री को माना जाता है वरन् अंतरराष्ट्रीय संबंध, अंतर सांस्कृतिक संबंध, नागरिकता की शिक्षा, विवादास्पद मामले आदि विषयों को भी स्थान प्रदान किया जाता है।

इसके क्षेत्र के अंतर्गत निम्नलिखित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है:–

- मानवीय संबंधों का अध्ययन।
- मानव निर्मित संस्थाओं का अध्ययन।
- नागरिकता के गुणों का विकास, अंतरराष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन।

- समाज से संबंधित अध्ययन।
- अतीत पर आधारित घटनाओं का अध्ययन।
- प्राकृतिक विज्ञान तथा विकास का अध्ययन।

विद्यालय में सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण में इतिहास की आवश्यकता को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है:-

1. **अतीत से प्रेम करने के लिए** – अतीत से प्रेम उत्पन्न होने पर ही छात्र अपनी सभ्यता और संस्कृति के महत्व को आत्मसात् कर सकते हैं और उसकी सुरक्षा हस्तांतरण और विकास में अपना योगदान दे सकते हैं। अतीत के संबंध में विश्वसनीयता और समग्रतायुक्त विवरण केवल इतिहास में ही उपलब्ध होता है और इसी के कारण तत्कालीन राष्ट्रीय इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ में अतीत के प्रति प्रेम उत्पन्न करने की सामर्थ्य निहित रहती है।
2. **कर्तव्यनिष्ठ नागरिकों के निर्माण में सहायक** – देश की संपूर्ण शासन व्यवस्था, शांति, स्थायित्व और प्रगति मूल रूप से देश के नागरिकों पर ही निर्भर करती है। कर्तव्य विमुख व्यक्तियों से संपन्न प्रजातंत्र देश में किसी भी प्रकार की प्रगति और विकास की अधिक समय तक अपेक्षा नहीं की जा सकती है।
3. सामाजिक क्षमताओं के विकास के लिए अपनी शारीरिक और मानसिक आवश्यकताओं की समय अनुकूल पूर्ति के लिए व्यक्ति को सामाजिक इकाइयों पर आश्रित रहना ही पड़ता है। सामाजिक विकास या विद्यार्थियों में विभिन्न समाजिक क्षमताओं और कौशलों का विकास करके उन्हें समाज के समायोजन हेतु योग्य बनाया जा सकता है।
4. **राष्ट्रीय दृष्टिकोण से इतिहास का महत्व** – राष्ट्रीय प्रगति के अभाव में व्यक्ति और समाज की प्रगति की कल्पना नहीं की जा सकती। इस दृष्टि से राष्ट्रीय अखंडता, राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रीय जागृति आदि की भावनाओं का विकास आवश्यक है। इतिहास में निहित तथ्यों के आधार पर हमें यह ज्ञात होता है कि राष्ट्र की प्रगति अथवा अस्तित्व विभिन्न धर्मो, जातियों, वर्गो और राष्ट्र की वर्तमान स्थिति इत्यादि के योगदान का ही परिणाम है।
5. **भूतकाल के आधार पर वर्तमान का स्पष्टीकरण** – इसमें संदेह नहीं कि किसी भी विषय की उपयोगिता के अभाव में हम अधिक समय तक उस विषय को सार्थक महत्व प्रदान नहीं कर सकते। यदि उपयोगिता ही किसी वस्तु, व्यक्ति, विचार इत्यादि ही किसी ज्ञान की शाखा के महत्व की कसौटी है या उसके महत्व का प्रतिपादन करती है तो इतिहास को सर्वप्रथम महत्त्व इसलिए प्रदान किया जाता है और इसी कारण हम इतिहास में अपनी रुचि प्रकट करते हैं। जॉन डीवी के अनुसार, ''हमारी रुचि इतिहास में इसलिए नहीं है कि वह अतीत के गौरव को बताता है बल्कि रुचि इसलिए है क्योंकि इसके द्वारा वर्तमान सामाजिक जीवन के

भिन्न-भिन्न स्वरूप और शक्तियों का स्पष्टीकरण किया जाता है, साथ-साथ यह हमें भविष्य के विषय में सोचने के लिए तैयार करता है।

6. **समन्वयात्मक ज्ञान द्वारा मनोवैज्ञानिक विकास** – समन्वयात्मक ज्ञान के अभाव में ना तो विद्यार्थियों को पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो सकती है और न ही वे पर्याप्त ज्ञान को अपने जीवन का स्थाई अंग बनाने में सक्षम हो सकते हैं। विखंडित रूप में प्रदत ज्ञान विद्यार्थियों की अवबोध क्षमता का विकास करने में बाधा उत्पन्न करता है जो सुसंबद्ध ज्ञान के अभाव में छात्र अपने विभिन्न समस्याओं का निराकरण निकालने और सुसंबद्ध और व्यापक ज्ञान के आधार पर उपयुक्त निष्कर्ष निकालने में भी असमर्थ रहते हैं।
7. **वर्तमान समस्याओं के स्पष्टीकरण तथा समाधान के लिए** – इतिहास में निहित विभिन्न तथ्यों के आधार पर न केवल भूतकालीन मानवीय क्रियाकलापों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है वरन् वर्तमान जीवन में उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का समाधान भी सफलतापूर्वक किया जा सकता है। किसी भी समस्या का समाधान करने के लिए उस समस्या के उद्गम कारणों और पूर्व परिस्थितियों का ज्ञान अत्यधिक आवश्यक होता है।
8. **विद्यार्थियों के मानसिक विकास में सहायक** – विद्यालयी पाठ्यक्रम में इतिहास ही एकमात्र ऐसा विषय है जो विद्यार्थियों की बहु-पक्षीय मानसिक क्षमताओं एवं शक्तियों के विकास में सहायक है। के.डी. घोष के शब्दों में, ''इतिहास के द्वारा विद्यार्थियों को एक विशेष प्रकार की मानसिक शिक्षा प्रदान की जाती है जो कि विद्यालय के अन्य किसी भी विषय के द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती।''
9. **व्यक्तित्व और चरित्र का विकास करने के लिए** – व्यक्तित्व और चरित्र का विकास ही सफल जीवन व्यतीत करने के योग्य बना सकता है। अतः इस उद्देश्य को भी शिक्षा के मुख्य उद्देश्य के अंतर्गत स्वीकार किया जाता है। इतिहास में भिन्न-भिन्न महापुरुषों, संतो, प्रशंसकों इत्यादि की जीवन शैली और कार्यो का वर्णन किया जाता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों को इनकी शैली का अनुसरण करने और समाज के कल्याण के लिए विशेष कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।
10. **अंतरराष्ट्रीय भावना के विकास के लिए** – आधुनिक युग में संपूर्ण राष्ट्र अपनी भौगोलिक सीमाओं को तोड़कर किसी-न-किसी रूप में परस्पर संबंध है। सामाजिक तथा आर्थिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक आदि विविध क्षेत्रों में प्रत्येक राष्ट्र एक-दूसरे पर किसी-न-किसी तरह आश्रित है। इतिहास के माध्यम से राष्ट्र को विद्यार्थियों को पारस्परिक योगदान और इस संबंध में ज्ञान प्राप्त होता है।

सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण हेतु भूगोल की आवश्यकता – उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण के लिए भूगोल की आवश्यकता को निम्न बिंदुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है:-

1. **जीविकोपार्जन में सहायक** – भूगोल जानने वाले व्यक्ति भूगोल से अनभिज्ञ व्यक्ति की अपेक्षा जीविकोपार्जन अधिक सफलतापूर्वक कर सकता है चाहे व व्यापारी हो, कृषक हो, सैनिक हो या अन्य व्यावसायी।
2. **भली प्रकार जीवन व्यतीत करने में सहायक** – जीविकोर्जन में मनुष्य का बहुत ही अल्प समय लगता है। प्राय: जीविकार्जन में औसतन समय संसार के लोगों की कुल समय का 1/5 लगता है जो करीब 5 घंटे बैठता है। हालांकि भारत के कुल समय के लिए यह समय थोड़ा है और अधिक हो सकता है फिर भी 8 घंटे से अधिक नहीं।
3. **समय का सदुपयोग** – भूगोल विषय अवकाश के समय का सदुपयोग में सहायक होता है। एक महत्व की बात यह है कि उसके सामने दुनिया बहुत छोटी हो जाती है। दुनिया की घटनाएँ उसे अपने देश की ही घटनाएं लगती हैं। उसे कालाहारी के बुशमैन अथवा टुंड्रा के एस्कीमो से उतनी ही सहानुभूति होती है जितनी राजस्थान और मध्य प्रदेश के भील और संथालों से।
4. **मनुष्य के सांस्कृतिक विकास में सहयोग** – भूगोल विषय के ज्ञान द्वारा मनुष्य को दुनिया के मध्य खड़ा कर देता है जहां वह अपने संसार के लोगों के प्रति दायित्वों का विवेचन कर सकता है।
5. **संकीर्णता को दूर करने में मदद** – भूगोल की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह संकीर्णता के पर्दे का फाश करती है। उदाहरण के तौरपर संकुचित राष्ट्रीयता के जोश में बहुत से भारतीय उस समय जब भारत और पाकिस्तान के मध्य तनाव चल रहा था, अथवा युद्ध चल रहा था, यह चाह रहे थे कि समस्त पंजाब और कश्मीर की नदियों का पानी रोककर भारत में ही प्रयोग किया जाए। इस तरह सिंधु, झेलम आदि नदियों के पानी के अभाव में पाकिस्तान घुटने टेक देगा। यह दृष्टिकोण बड़ा ही संकुचित दृष्टिकोण है। ठीक है दो सरकारों में मतभेद है परंतु पाकिस्तान के लोगों ने क्या बिगाड़ा है। ईश्वर की पृथ्वी पर जीने का हक सबको है। एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के जीने में सहयोग देना चाहिए।
6. **मानव कल्याण के लिए सही मार्गदर्शन** – आजकल विश्व के विद्वान यह मानते हैं कि विज्ञान उस समय तक मानव का भला नहीं कर सकता जब तक दर्शन को साथ नहीं लिया जाए। यही बात भूगोल के लिए भी चरितार्थ होती है। यह विषय भी मानव कल्याण के लिए अधिक लाभकारी सिद्ध हो सकता है यदि विद्यार्थियों में शिक्षक पृथ्वी के मानव मात्र के प्रति प्रेम और सद्भावना के भाव पोषित करें।
7. **सभ्यता के अध्ययन के लिए** – इतिहास का कोई महत्व नहीं होगा जब तक यह ज्ञात नहीं हो कि कोई घटना कहाँ घटी। उदाहरणार्थ राणा प्रताप अथवा अकबर का युद्ध स्थल हल्दीघाटी क्यों चुना गया और इस स्थान का क्या प्रभाव पड़ा?

भूगोल समझने में मदद देता है। भूगोल रंगमंच का वर्णन करता है जबकि इतिहास इस रंगमंच पर होने वाले नाटक का वर्णन मात्र है।

सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण हेतु राजनीति विज्ञान की आवश्यकता

विद्यालय में सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण हेतु राजनीति विज्ञान की आवश्यकता को निम्न बिंदुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है:-

1. **स्वस्थ सामाजिक जीवन का विकास** - राजनीति विज्ञान का अध्ययन स्वस्थ सामाजिक जीवन के विकास के लिए बहुत उपयोगी है। राजनीति विज्ञान व्यक्ति में स्नेह, सहानुभूति, समाज सेवा, सहयोग, कर्तव्य पालन आदि गुणों का विकास करता है। यह गुण स्वस्थ सामाजिक जीवन के विकास के लिए परम आवश्यक है।
2. **जनसाधारण के लिए उपयोगी** - राजनीति विज्ञान का अध्ययन जनसाधारण के लिए निम्नलिखित दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है जैसे - व्यक्ति तथा समाज के पारस्परिक संबंध का ज्ञान कराने के लिए, सामाजिक चेतना के विकास के लिए, अधिकार एवं कर्तव्य का ज्ञान प्रदान करने के लिए, राजनीतिक चेतना के विकास के लिए आदि।
3. **लोकतंत्र की सफलता के लिए** - लोकतंत्र की सफलता के लिए एक स्थाई सेना की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी कि शिक्षित नागरिकों की। लोकतंत्र योग्य नागरिकों के ऊपर निर्भर है। माध्यमिक शिक्षा आयोग के शब्दों में, ''लोकतंत्र में नागरिकता एक चुनौतिपूर्ण दायित्व है जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को सफलतापूर्वक प्रशिक्षित किया जाना परम आवश्यक है।''
4. **नेतृत्व के विकास के लिए** - माध्यमिक शिक्षा आयोग ने लिखा है, ''लोकतंत्र तब तक सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सकता जब तक उसके सभी सदस्य या जनता के अधिकांश भाग को अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिए प्रशिक्षित नहीं किया जाए। जनता अपने दायित्वों का निर्वाह तभी कर सकती है जब उसे अनुशासन एवं नेतृत्व करने की कला में प्रशिक्षित कर दिया जाएगा।''
5. **विद्यार्थियों के लिए उपयोगी** - नागरिक शास्त्र का अध्ययन विद्यार्थियों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि आज का विद्यार्थी आने वाले कल का नागरिक है। आज के लिए विद्यार्थी कल के लिए राष्ट्र निर्माता, समाज सुधारक, अर्थशास्त्री, शासक एवं राजनीतिज्ञ होते हैं और कोई भी व्यक्ति तब तक अपने को आदर्श शासक या राष्ट्र निर्माता सिद्ध नहीं कर सकता जब तक वह एक आदर्श नागरिक न हो। अत: आज के विद्यार्थियों को राजनीति विज्ञान का अध्ययन परम आवश्यक है।

सामाजिक विज्ञान विषय के अध्ययन में अर्थशास्त्र की आवश्यकता

सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण में अर्थशास्त्र की आवश्यकता को अर्थशास्त्र के सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक महत्व के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है:-

1. **सैद्धांतिक महत्व के आधार पर अर्थशास्त्र की आवश्यकता** - अर्थशास्त्र के सैद्धांतिक महत्त्व को निम्न बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है जैसे:-

   - सैद्धांतिक ज्ञानवर्धन-अर्थशास्त्र शिक्षण से विद्यार्थियों को आर्थिक पदों, नियमों तथा अवधारणाओं का ज्ञान प्राप्त होता है।
   - मानसिक शक्तियों का विकास-समूह मनोविज्ञान के समर्थकों के अनुसार मस्तिष्क के विभिन्न विभागों अर्थात तर्कशक्ति, निर्णय शक्ति, चिंतन शक्ति, स्मरण शक्ति, अवलोकन शक्ति आदि का समूह है। अर्थशास्त्र के शिक्षण से इन शक्तियों का विकास होता है ।
   - **व्यापक दृष्टिकोण** - अर्थशास्त्र के द्वारा विद्यार्थियों में ज्ञान की वृद्धि होती है। इस ज्ञान के सहारे वह अपने आर्थिक व्यवस्था को भली-भांति समझ जाता है जिसमें वह अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। इसके साथ-साथ विभिन्न देशों की आर्थिक व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन करके इस निष्कर्ष पर पहुंचने में समर्थ हो जाता है कि मानव कल्याण के लिए कौन सी आर्थिक व्यवस्था उपयुक्त होगी।
   - **विभिन्न तथ्यों के सापेक्षिक महत्व को समझने की शक्ति** - अर्थशास्त्र शिक्षण से विद्यार्थी की बुद्धि तीक्ष्ण हो जाती है। इसके आधार पर वह अनेक घटनाओं एवं वस्तुओं में से उपयुक्त एवं उचित को निकालकर ग्रहण कर लेता है और अनावश्यक घटनाओं का परित्याग कर देता है। विद्यार्थी आर्थिक परिणामों को निकालने में विश्लेषण पद्धति का उपयोग करते हैं।

व्यवहारिक महत्त्व के आधार पर अर्थशास्त्र की आवश्यकता

- अर्थशास्त्र की प्रमुख आवश्यकता मस्तिष्क संबंधी अठखेलियाँ करना नहीं है और न यह कि उसके द्वारा हमें केवल ज्ञान प्राप्त होता है बल्कि यह आचारशास्त्र का साथी एवं व्यवहार को सुधारने वाला है।
- सीमित आय के व्यय से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने के साधनों का ज्ञान प्रदान करता है।
- व्यक्तिगत बजट के आधार पर व्यय करके अपनी आय का सदुपयोग करना सीखता है।
- वस्तुओं के क्रय-विक्रय के संबंध में ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

- आय को वर्तमान तथा भविष्य की आवश्यकताओं पर व्यय करने के लिए साधनों का ज्ञान प्राप्त करता है ।
- व्यक्ति अपनी बचत के विनियोजन के विभिन्न ढ़ंगों की जानकारी प्राप्त करता है।
- व्यापारी मुद्रा - प्रसार और संकुचन से प्राप्त होने वाले लाभों का ज्ञान प्राप्त करते हैं।
- व्यक्ति इस विषय के ज्ञान से अपनी सरकार के कर विषयक सिद्धांतों की समीक्षा करके सुधार करवा सकते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र का हमारे व्यक्तिगत, राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन में बहुत महत्व है। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षण का उद्देश्य वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को सुविकसित करना है।

इकाई–1.3

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 एवं बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2008 के संदर्भ में सामाजिक विज्ञान

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 (नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क–2005, NCF-2005) भारत में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद द्वारा 2005 में प्रकाशित किया गया चौथा राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क है। इसके पूर्व 1975, 1988, 2000 में प्रकाशित हुए थे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान की विषय–वस्तु इतिहास, भूगोल, राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र से मिलती है। इतिहास में भारत के अलग–अलग हिस्सों में होने वाले विकास पर ध्यान दिये जाने पर बल दिया गया। इसमें विश्व के अन्य भागों में हो रहे विकास के भी खंड होना चाहिए। भूगोल में पर्यावरण, संसाधन तथा स्थानीय से वैश्विक स्तर पर विभिन्न स्तरों के विकास के बीच संतुलन बैठाने का प्रयास पर बल दिया गया। राजनीति विज्ञान में विद्यार्थियों का परिचय स्थानीय, राज्य और केंद्रीय स्तर पर सरकार के गठन और उनके कार्यो और सहभागिता की प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं से कराया जाना चाहिए। अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों को आर्थिक संस्थानों जैसे परिवार, बाजार और राज्य की समझ देने पर केंद्रित होना चाहिए। एक खंड इस प्रकार का हो जिसमें विभिन्न विषयों के अंतरअनुशासनिक के अध्ययन पर बल हो।

बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2008 में सामने आई। इसमें बच्चों की घर की बोली या उनकी मातृभाषा को उनके सीखने का सबसे मजबूत आधार माना गया। बच्चों को शिक्षा उनकी मातृभाषा के माध्यम से ही दिए जाने पर बल दिया गया। यह शिक्षा–शास्त्र का मान्य सिद्धांत है। बहुभाषिता बिहार के भूगोल की पहचान है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 एवं बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2008 पर आधारित पाठ्यक्रम शिक्षा के बारे में एक विशिष्ट दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। इसके अनुसार शिक्षा का मतलब बिहार के स्कूली शिक्षार्थियों को इतना सक्षम बना देना है कि वे अपने जीवन को जिंदा होने का सही सही अर्थ समझ सके, अपनी समस्त योजनाओं का समुचित विकास कर सके, अपने जीवन का मकसद तय कर सके और उससे प्राप्त करने हेतु यथासंभव सार्थक एवं प्रभावी प्रयास कर सके। साथ–ही, इस बात को भी समझ सके कि समाज के दूसरे व्यक्ति को भी ऐसा ही करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। यह संपूर्ण पाठ्यक्रम जिन महत्वपूर्ण शिक्षा शास्त्रीय मान्यताओं पर आधारित है उन्हें बिंदुवार निम्नलिखित रुप में स्पष्ट किया जा सकता है:–

- बिहार के विभिन्न सांस्कृतिक एवं सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि से आए शिक्षार्थियों में जिनकी संख्या स्कूलों में ज्यादा है, समानता की अवधारणा को पुख्ता करना।
- प्रतिस्पर्धा पर केंद्रित जीवन मूल्यों से बाहर निकालकर शांति सहिष्णुता एवं समानता, मानवता आधारित मूल्यों के विकास पर बल देना।
- स्वयं को दूसरे के माध्यम से अनुभव करने पर बल देना। कोई भी व्यक्ति बिल्कुल स्वतंत्र नहीं होता बल्कि दूसरे व्यक्ति के जीवन पर उसकी परस्पर निर्भरता रहती है इस बात को शिक्षार्थियों के जीवन में उतारना।
- सूचना ही ज्ञान नहीं है, ज्ञान सूचना से बड़ी अवधारणा है। ज्ञान कोई तैयार माल नहीं होता है बल्कि सदैव निर्मित होते रहता है शिक्षार्थी ज्ञान के ग्रहणकर्ता मात्र नहीं है बल्कि ज्ञान के निर्माण करने की भी उनमें अद्‌भुत क्षमता है।
- पाठ्यपुस्तक ही सीखने का साधन एवं परीक्षा के आधार है यह बात सही नहीं है। शिक्षार्थियों के अपने पूर्व के अनुभव एवं अन्य सामग्री, ज्ञान के सृजन में प्रमुख भूमिका अदा करती है।
- शिक्षार्थियों को सिखाने के बदले उनमें स्वतंत्र रूप से सीखने की प्रवृत्ति विकसित करना।
- शिक्षक ज्ञान बांटने वाला व्यक्ति नहीं बल्कि शिक्षार्थियों द्वारा ज्ञान के सृजन में एक सहायक व्यक्ति मात्र है।
- शिक्षार्थियों में अवलोकन, विश्लेषण, तर्कपूर्ण चुनाव, नवाचार, कल्पनाशीलता, सृजनशीलता, समस्या समाधान की प्रवृत्ति, निर्णय लेने की क्षमता आदि का विकास करना ना कि कुछ सूचनाओं का हस्तांतरण करना।
- शिक्षार्थियों में आत्म–सम्मान एवं नैतिकता का विकास करना, ज्ञात से अज्ञात की ओर तथा मूर्त से अमूर्त की ओर एवं स्थानीय से वैश्विक की ओर जाने पर प्रयास करना। इसके अंतर्गत कक्षा ज्ञान को जीवन अनुभव से जोड़ना जिससे हाशिए के समाज के शिक्षार्थियों को, जिनमें काम से जुड़े कौशल का ज्ञान होता है को शिक्षार्थियों से सम्मान मिल सकेगा।

- अशांत, प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण मानव संबंधों में तनाव लाता है, जिससे और सहिष्णुता एवं संघर्ष पैदा होता है। इसके लिए शांति की संस्कृति का निर्माण करना। शिक्षा का निर्विवाद उद्देश्य है, शिक्षार्थी शांति को जीवन शैली के रूप में चुन सके। संघर्ष को सुलझाने की क्षमता रखें न कि उसका मूक दर्शक बने।
- अर्थ निर्माण व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों तौर पर संभव हो सके, ऐसा ज्ञान, कौशल का रूप लेता है जो स्कूल के बाहर घर अथवा समुदाय में प्रचलित होता है।
- सीखने के लिए घूमना, खोजना, अकेले काम करना, या अपने दोस्तों या वयस्कों के साथ काम करना, भाषा पढ़ना, अभिव्यक्त करना और सुनने के लिए प्रयोग करना आदि कुछ ऐसी महत्वपूर्ण क्रियाएं हैं जिसे अधिगम होता है।

इस प्रकार, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा- 2005 राष्ट्रीय स्तर पर उच्च प्राथमिक स्तरीय शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न मानवीय एवं सामाजिक गतिविधियों को शामिल करते हुए मनुष्य को समस्त व्यक्तिगत एवं सामाजिक क्रियाकलापों से अवगत कराना है, वहीं दूसरी ओर बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2008 जिसका आधार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 है, के अनुसार क्षेत्रीय भाषाओं, बोलियों एवं परंपराओं को शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में शामिल करने पर भी बल देता है ताकि विद्यार्थियों को स्थानीय परंपराओं एवं संस्कृतियों का भी भली-भांति ज्ञान हो सके। दोनों पाठ्यचर्या का संयुक्त उद्देश्य सामाजिक विज्ञान की समझ को प्राप्त करना एवं समाज से न केवल सहयोग प्राप्त करना बल्कि सामाजिक सहयोग भी प्रदान करना ताकि उनके साथ-साथ समाज के समस्त लोगों का भी विकास संभव हो सके।

समेकन

इस इकाई में हमने जाना कि किस प्रकार सामाजिक विज्ञान के समझ के अंतर्गत विविध सरोकार आते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और मनुष्य का समाज से घनिष्ठ एवं अनिवार्य संबंध होता है। सामाजिक विज्ञान के अध्ययन की प्रकृति कला एवं विज्ञान दोनों ही रूपों में है। यह मानव समाज का अध्ययन करने वाली शैक्षिक विद्या है जिसका उद्देश्य प्रमुखतः उत्तम नागरिकता का विकास एवं राष्ट्रीय भावना के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय सद्भावना का विकास करना है। सामाजिक विज्ञान का महत्व व्यक्तिक एवं सामाजिक दोनों दृष्टिकोण से है। सामाजिक दृष्टि से स्वस्थ दृष्टिकोण, सहयोग की भावना, समाज की प्रगति, सामाजिक जागरूकता, अंतरराष्ट्रीय सद्भावना आदि है। वही, व्यक्ति की दृष्टि से, चरित्र निर्माण, कुशलता का विकास, वातावरण के साथ सामंजस्य आदि है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र के रूप में इतिहास भूगोल नागरिक शास्त्र एवं अर्थशास्त्र है। इतिहास में अतीत से प्रेम, भूतकाल के आधार पर वर्तमान का स्पष्टीकरण, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय भावना पर बल है। वही भूगोल राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों की पहचान की ओर समझ पर बल देता है। जबकि, नागरिक शास्त्र व्यक्ति विकास के साथ-साथ सामाजिक विकास

की ओर संकेत है तथा अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था के सैद्धांतिक ज्ञान के साथ-साथ व्यावहारिक ज्ञान से अवगत कराता है। सामाजिक विज्ञान अध्ययन के शिक्षण में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 तथा बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2008 में वैयक्तिक एवं सामाजिक समाज के विकास हेतु सर्वांगीण विकास पर बल देता है।

ई -संसाधन

- कंप्यूटर ग्रंथालय
- कंप्यूटर नेटवर्क
- ग्रन्थपरक डाटाबेस
- इलेक्ट्रॉनिक सर्च इंजन
- डिजिटल संग्रह

मूल्यांकन

1. सामाजिक विज्ञान की अवधारणा को स्पष्ट करें।
2. सामाजिक विज्ञान के अर्थ एवं प्रकृति को लिखें।
3. सामाजिक विज्ञान के उद्देश्यों के निर्धारण में सहायक तत्व को लिखें।
4. सामाजिक विज्ञान की समझ क्यों जरूरी है? इसके महत्व को बताएं।
5. सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के प्रमुख क्षेत्रों की पहचान कर संक्षिप्त विवरण दें।
6. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा 2005 के संदर्भ में सामाजिक विज्ञान के उद्देश्यों की पहचान करें ।
7. सामाजिक विज्ञान की समझ में विभिन्न क्षेत्रों की क्या भूमिका है ?

परियोजना कार्य

1. योग्य नागरिक के निर्माण में समाज के योगदान पर प्रायोजना कार्य तैयार कीजिए।

इकाई – 2

उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें

इकाई– 2.1

- **प्रस्तावना**
- **उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम**
- **NCF 2005 तथा BCF 2008**
- **विद्यालय में सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम**
- **उच्च प्राथमिक स्तर (6,7,और 8) पर सामाजिक विज्ञान के संबंद्ध विषय**
- **उच्च प्राथमिक कक्षाओं में सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उधेश्य (कक्षा 6 से 8)**

इकाई– 2.2

- **सामाजिक विज्ञान के विभिन्न विषयों के पाठ्य-पुस्तकों की समझ**
- **सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में पाठ्य-पुस्तक का महत्व एवं आवश्यकता**
- **सामाजिक विज्ञान अध्ययन की अच्छी पाठ्य-पुस्तक का चयन**

इकाई– 2.3

- **सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत विभिन्न विषयों के विषय-वस्तुओं की समझ**
- **सामाजिक विज्ञानः इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र**
- **समेकन**
- **मूल्यांकन**

इकाई– 2.1

प्रस्तावना

सामाजिक विज्ञान अध्ययन के उद्देश्य का विवेचन इकाई एक के अध्ययन में किया जा चुका है। उच्च प्राथमिक स्तर के सामाजिक विज्ञान अध्ययन के लक्षण एवं प्राप्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एक उपयुक्त पाठ्यक्रम का होना अति आवश्यक है। एक शिक्षक के समक्ष सदैव यह प्रश्न उठता है कि किसी विषय वस्तु को किस प्रकार पढ़ाया जाए? एवं क्यों पढ़ाया जाए? आदि प्रश्न सदैव समस्या के रूप में बने रहते हैं। किसी भी शिक्षक का शिक्षण कार्य एवं समस्त शिक्षण प्रक्रिया का आधार इन्हीं प्रश्नों के स्तर पर निर्भर रहता है। इसलिए यह अति आवश्यक है कि वह सबसे पहले विषय से संबंधित पाठ्यक्रम की स्पष्ट समझ विकसित कर ले।

व्यवहारिक रूप से यह देखा गया है कि क्या पढ़ाया जाए और किस प्रकार पढ़ाया जाए? इन प्रश्नों का हल भी पाठ्यक्रम में ही निहित होता है। किसी भी कक्षा में बालक/ बालिकाओं के मानसिक स्तर एवं उनकी क्षमता के आधार पर निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षण कार्य संपन्न किया जाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि पाठ्यक्रम किसी संस्था की वह मजबूत सीढ़ी होती है। जिसकी सहायता से नवीन ज्ञान की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है।

उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम का अर्थ

पाठ्यक्रम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द से हुई है। क्यूरेर (Currere) का अर्थ होता है दौड़ का मैदान (रेस कोर्स)। इस प्रकार दौड़ का वह मैदान, जिसपर बालक लक्ष्य प्राप्ति के लिए दौड़ता है।

पाठ्यक्रम के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ विद्वानों शिक्षा शास्त्रियों एवं आयोगों ने परिभाषाएं प्रस्तुत की हैं, जिनका विवरण निम्नांकित है:-

कनिंघम के अनुसार - शिक्षक के हाथ में यह पाठ्यक्रम एक साधन है जिससे वह पदार्थ को अपने आदर्श उद्देश्य के अनुसार अपने स्टूडियो स्कूल में अनुकूल रूप से डाल सकें।

रुडयार्ड व हेनरी के अनुसार - अपने व्यापक अर्थ में पाठ्यक्रम के अंतर्गत संपूर्ण विद्यालय वातावरण आता है जिसमें सभी प्रकार के कोर्स, पाठ्य-विषय, क्रियाएं, पढ़ना तथा साहचर्य सम्मिलित है जो विद्यार्थियों को विद्यालय में प्राप्त होते हैं।

मुनरो के अनुसार - पाठ्यक्रम में वैसी क्रियाएं सम्मिलित हैं जिनका हम शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु विद्यालय में उपयोग करते हैं।

क्रो एंड क्रो के अनुसार - पाठ्यक्रम में विद्यार्थी के वे सभी अनुभव सम्मिलित होते हैं जिन्हें वह विद्यालय में या विद्यालय से बाहर प्राप्त करता है। इन अनुभवों को इस प्रकार एक कार्यक्रम के रूप में व्यवस्थित कथा नियोजित किया जाता है जिससे वह विद्यार्थियों के मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक तथा नैतिक विकास को अग्रसित कर सकें।

NCF 2005 तथा BCF 2008

NCF 2005 की रुपरेखा के अंतर्गत सामाजिक विज्ञान की एक रुपरेखा प्रदान करती है, जिसमें शिक्षक एवं स्कूल उन अनुभवों की योजना बना सकते हैं, जो उन्हें लगता है कि बच्चों के पास होने चाहिए।

BCF-2008 की रूपरेखा के अंतर्गत सामाजिक विज्ञान की एक रूपरेखा प्रदान करती है, जिसमें शिक्षक एवं विद्यालय उन अनुभवों की योजना बना सकते हैं जो उन्हें लगता है बच्चों के पास अपने सामाजिक पर्यावरणीय अनुभव होने चाहिए।

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है:-

1. जो कुछ भी पढ़ा और सीखा जाता है उसकी क्रमबद्ध व्यवस्था को पाठ्यक्रम कहते हैं। (''Curriculum is the orderly arrangement of what is thus to be studied or learned'')
2. पाठ्यक्रम उन सभी ज्ञान और अनुभवों का एकीकृत संग्रह है, जो विद्यार्थियों के स्वयं तथा समाज के विकास के लिए आवश्यक है। (''Curriculum is the sum of all the knowledge and experiences needed for the students for the development of the self and the society'')
3. विद्यार्थियों के अधिगम अनुभवों की वह संपूर्णता निहित है, जिसको विद्यार्थी, विद्यालय, कक्षा-कक्ष, पुस्तकालय, वर्कशॉप, प्रयोगशाला और खेल के मैदान तथा छात्र-शिक्षक के आपसी संपर्क अनुभवों से प्राप्त करता है।

अत: यह कहा जा सकता है कि विद्यालय की संपूर्ण जीवन जिससे विद्यार्थी प्रभावित होते हैं, जिसकी सहायता से उनके संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है।

विद्यालय में सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धांतों पर विचार करने के बाद प्रश्न उठता है कि भारतीय परिवेश में स्कूली शिक्षा में सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम किस प्रकार का होना चाहिए, उसमें किस प्रकार की विषय सामग्री का समावेश होना चाहिए? इस प्रश्न पर विचार करने के लिए विद्यालयी शिक्षा के संपूर्ण ढांचे पर दृष्टि डालना आवश्यक होगी। हमारे देश में स्कूली शिक्षा विभिन्न स्तरों में विभाजित है। अत: उन विभिन्न स्तरों के आधार पर ही सामाजिक अध्ययन पाठ्यक्रम की बात की जाए तो अधिक तर्कसंगत होगा और ऐसा करना अध्ययन की दृष्टि से भी सुविधाजनक होगा। भारत में स्कूली शिक्षा को निम्नांकित स्तरों में विभाजित किया गया है:-

1. प्राथमिक स्तर
2. उच्च प्राथमिक स्तर
3. माध्यमिक स्तर
4. उच्च माध्यमिक स्तर

उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम:

उच्च प्राथमिक स्तर पर कक्षा 6 से 8 तक के वह बच्चे आते हैं जिनका औसत आयु समूह 12 से 15 वर्ष तक होता है। यह स्तर किशोरावस्था के अंतर्गत आता है। इस

अवस्था में शारीरिक एवं मानसिक विकास तेजी से होता है, विद्यार्थी अपने मान सम्मान के प्रति पूर्ण सजग हो जाता है। वह बचपन से निकलकर किशोरावस्था की दहलीज पर कदम रख देता है। अतः वह न केवल अधिक जानने के लिए तैयार होता है बल्कि भावी कल्पनाएं भी करने लगता है। यहां तक कि वह अपने काल्पनिक संसार से निकलकर वास्तविक संसार से साक्षात्कार करने को उद्धत होता है एवं क्रियाशीलता में भी रुचि प्रदर्शित करता है। इस स्तर पर सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में निम्नांकित बिंदुओं का समावेश किया जा सकता है:-

1. **देश के सामाजिक अध्ययन का समावेश** – इसके अंतर्गत भौगोलिक परिस्थितियाँ यातायात व्यवसाय मानवीय एवं आर्थिक जीवन आदि का अध्ययन किया जा सकता है।
2. **एशिया का सामाजिक अध्ययन** – विद्यार्थियों को एशिया महाद्वीप के विभिन्न राष्ट्रों की भौगोलिक परिस्थितियाँ, प्रमुख देश एवं जनजातियों के बारे में जानकारी कराना।
3. **विश्व का सामाजिक अध्ययन** – विविध व्यवसाय भौगोलिक वातावरण, मानव का अंर्तसंबंध, विश्व की प्रमुख समस्याएं, यातायात, ऊर्जा के स्रोत, खनिज पदार्थ, विश्व मानचित्र, विश्व के कटिबंध आदि की जानकारी देना।
4. **भूगोल विषय में एटलस के प्रयोग का समावेश** – विद्यार्थियों में एटलस के उपयोग की क्षमता विकसित करना ताकि वह नगर, राज्य, देश, बंदरगाह, राजधानी, यातायात, खनिज पदार्थ, ऊर्जा के स्रोत, उच्चावच, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति इत्यादि से संबंधित अंकन में एटलस की सहायता ले सके।
5. **भूगोल विषय में ग्लोब का उपयोग** – विद्यार्थी दिन-रात का होना, ऋतु-चक्र, समय, कटिबंधीय पवन के वायुदाब पेटी आदि से संबंधित जानकारी ग्लोब की सहायता से प्राप्त करने में सक्षम हो सकते हैं।
6. विविध प्रकार के मॉडल बनाना।
7. विविध प्रकार की समस्याओं संबंधी जानकारी का समावेश होना।
8. भ्रमण द्वारा अधिकाधिक जानकारी देना ताकि विद्यार्थी ज्ञान को आसानी से आत्मसात कर सकें।

उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा 6, 7 और 8) पर सामाजिक विज्ञान के संबद्ध विषय

पाठ्यक्रम के विषयों को इस प्रकार व्यवस्थित करना जिससे एक विषय के शिक्षण में दूसरे विषयों का ज्ञान सहायक हो, उसको सहसंबंध सिद्धांत कहते हैं। इस संबंध के अनुसार नवीन शिक्षण तभी ग्राही हो सकता है जब उनका संबंध हमारी चेतना में विद्यमान विचारों से स्थापित किया जा सकता हो। इसी पूर्व ज्ञान के सहारे शिक्षक को नवीन ज्ञान में विद्यार्थियों की रुचि तथा ध्यान को केंद्रित करना चाहिए तभी नवीन ज्ञान स्थाई हो सकता

है। एक शिक्षक को पाठ्यक्रम के अन्य विषयों को इस प्रकार संबंधित करके पढ़ाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों के मस्तिष्क पर उसका स्थाई प्रभाव पड़े।

ज्ञान अखंड है, परंतु शिक्षण एवं अध्ययन की सुविधा के लिए उसका वर्गीकरण कर दिया गया है और प्रत्येक वर्ग को एक विषय कहा जाता है। प्रत्येक विषय का विशेष उद्देश्य होता है, जिसको प्राप्त करना प्रत्येक विद्यार्थी का ध्येय होता है। विद्यार्थी का मस्तिष्क एक अविभाज्य इकाई है। समस्त विषयों की सामग्री उसी एक मस्तिष्क द्वारा ग्रहण की जाती है। अतः मस्तिष्क विभिन्न विषयों की पाठ्यवस्तु का पारस्परिक संबंध तुलना तथा मिश्रण करके उन्हें ग्रहण करता है साथी एक विषय के अनुभवों को दूसरे विषय के अनुभवों के साथ संबंध स्थापित करने में लगा रहता है। इस प्रकार ज्ञान की अखंडता, मस्तिष्क की विभाज्यता एवं संबंधीकरण क्रिया को देखने से स्पष्ट होता है कि एक विषय का दूसरे विषयों से संबंध स्थापित करना आवश्यक है।

संबद्ध विषय

सामाजिक विज्ञान शिक्षण में सहसंबंध निम्नलिखित उद्देश्यों से स्थापित किया जाता है-

1. सहसंबंध का प्रमुख उद्देश्य पाठ्यक्रम के भार को कम करना है। वर्तमान में स्कूलों में पढ़ाई जाने वाले विषयों की संख्या बहुत अधिक है, जिसका शिक्षण सह संबंध के अभाव में अत्यंत कठिन है। अतः सामाजिक विज्ञान का शिक्षण दूसरे विषयों के साथ संबंधित स्थापित करके किया जाता है।
2. सहसंबंध का एक उद्देश्य शिक्षण में रुचि जागृत करना है। इसके लिए सामाजिक विज्ञान का दूसरे विषयों से संबंध आवश्यक है। सहसंबंध स्थापित करने से विद्यार्थी अपनी रूचि के अनुसार शिक्षा ग्रहण करने में समर्थ होंगे और यह ज्ञान स्थाई होगा।
3. सहसंबंध का उद्देश्य विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के समय की बचत करना है। इससे कम समय में अधिक तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। बहुत से विषयों में एक से अधिक पाठ होते हैं। सहसंबंध से शिक्षक उनको अलग-अलग विषयों के अंर्तगत न पढ़ा कर समन्वित रूप से पढ़ा सकते हैं, जिससे समय की बचत हो सकती है।
4. सहसंबंध के द्वारा विद्यार्थियों को ज्ञान की एकता एवं अखंडता का ज्ञान कराया जा सकता है। इसके लिए इस विषय का शिक्षण दूसरे विषयों की शिक्षा से पृथक ना कर के समन्वित रूप से करना चाहिए।
5. सहसंबंध का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को व्यवहारिक बनाना है, इसीलिए सामाजिक विज्ञान शिक्षण का अन्य विषयों से संबंध स्थापित करना आवश्यक है।
6. सहसंबंध के द्वारा विद्यार्थियों में सामाजिक विज्ञान का अन्य विषयों से संबंध स्थापित कर उनमें सामाजिक गुणों का विकास किया जाता है और उनमें आदर्श नागरिकता के गुण उत्पन्न किया जा सकता हैं।

7. सहसंबंध के द्वारा विद्यार्थियों को संघ के नेता की भावना से दूर रखा जा सकता है।
8. मानवीय संबंधों को समझाने के लिए सामाजिक अध्ययन का अन्य सामाजिक विज्ञानों से सहसंबंध आवश्यक है।

उच्च प्राथमिक कक्षाओं में सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य (कक्षा 6 से 8)

उच्च प्राथमिक कक्षाओं में सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. **सामाजिक विज्ञान शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण ज्ञानात्मक उद्देश्य है** - सामाजिक परिस्थितियों और उत्तरदायित्व को समझने की क्षमता उत्पन्न करना। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञान संबंधी पदों और प्रयत्नों का ज्ञान प्रदान किया जाता है।
2. **कार्य** -भूत-वर्तमान, साधन-साध्य का संबंध बताने के साथ-साथ सामाजिक संस्थाओं के परस्पर संबंधों का ज्ञान कराना तथा स्थानीय प्रांतीय राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रशासकीय प्रणालियों का ज्ञान कराना।
3. प्रत्येक नागरिक कुछ विशिष्ट सामाजिक स्थितियाँ, नियम, संस्थाओं के संबंध में वांछित सूचनाएं बिना प्राप्त किए ना तो अपने सामाजिक वातावरण को समझ सकता है और ना अपने कर्तव्यों का निर्धारण कर सकता है। अत: सामाजिक वातावरण का ज्ञान कराना सामाजिक विज्ञान का अन्य उद्देश्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स्थानीय स्तर पर हमें विभिन्न पंचायतों, उनके कर्तव्य एवं संगठन अथवा नगर पालिका, नगर निगम तथा उनके कार्यो एवं संगठन का ज्ञान विद्यार्थियों को कराना आवश्यक है। प्रांतीय स्तर पर राज्य के विधान मंडल, मंत्री मंडल, राज्यपाल, राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय संसद, प्रधानमंत्री एवं राष्ट्रपति आदि के कर्तव्यों का ज्ञान कराना आवश्यक है।
4. वातावरण के ज्ञान के लिए प्रत्येक नागरिक को अपने भौगोलिक एवं ऐतिहासिक वातावरण का ज्ञान आवश्यक है। हिमालय, विंध्याचल जैसे पर्वत, गंगा, यमुना आदि नदियां, विविध प्रकार के मौसम, विभिन्न प्रकार के स्थलाकृतियां आदि ऐसे भौगोलिक तत्व हैं जिन्होंने हमारे सामाजिक जीवन को प्रभावित कर रखा है। रामायण, महाभारत, बुद्ध, अशोक, तुलसी, मीरा, शिवाजी, लक्ष्मीबाई, ताजमहल, बोधगया, लाल किला ऐसे ऐतिहासिक तत्व हैं जिन्होंने वर्तमान निर्माण में भी सहयोग दिया है। अत: इनकी जानकारी आवश्यक है। इनके अतिरिक्त वर्तमान में नित्य अनेक घटनाएं समस्याएं अथवा आंदोलन होते रहते हैं, जिनकी जानकारी नागरिकों को होनी चाहिए। हमें कार्य-कारण, भूत-वर्तमान, साधन-साध्य का संबंधित ज्ञान पर जोर देना चाहिए।
5. विद्यार्थियों में विश्व बंधुत्व एवं अंतर्राष्ट्रीय ताकि भावना का विकास करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठनों का ज्ञान कराना भी आवश्यक है।

इकाई–2.2

सामाजिक विज्ञान के विभिन्न विषयों के पाठ्य-पुस्तकों की समझ

पाठ्यपुस्तक का अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान है। पुस्तकों में सभी प्रकार का ज्ञान संचित होता है। इस संचित ज्ञान के आधार पर ही किसी प्रकार की खोज या नवीन ज्ञान की प्राप्ति की की जा सकती है। अतः पुस्तकों का ज्ञान अर्जन में महत्व दिनों दिन बढ़ रहा है।

पाठ्य-पुस्तक का अर्थ

सामान्यतः प्रत्येक प्रकार की पुस्तक को पाठ्यपुस्तक कहा जाने लगा है, परंतु प्रत्येक पुस्तक को पाठ्यपुस्तक नहीं कहा जा सकता। अतः सामान्य पुस्तक एवं पाठ्यपुस्तक में अंतर जानने के लिए पाठ्यपुस्तक का अभिप्राय अर्थ जानना अति आवश्यक है। ऑक्सफोर्ड कन्साइज शब्दकोष के अनुसार – पाठ्यपुस्तक वह साधन है जिसके द्वारा शिक्षक मार्गदर्शन देता है तथा विज्ञान की शाखा की एक प्रामाणिक पुस्तक होती है। हम कह सकते हैं कि पाठ्यपुस्तक से अभिप्राय किसी भी विषय की उस पुस्तक से है, जो एक स्तर विशेष के विद्यार्थी हेतु संबंधित प्रशासनिक व्यवस्था द्वारा मान्य हो एवं विद्यार्थी उसे अपने अध्ययन के लिए प्रयोग में लाते हों।

सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में पाठ्यपुस्तक का महत्व एवं आवश्यकता

वर्तमान शिक्षा पद्धति में पाठ्यपुस्तक की महत्ता एवं आवश्यकता पर विचार किया जाए तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शिक्षार्थियों के लिए पाठ्यपुस्तक का महत्व बहुत ही अधिक है क्योंकि आज की परिस्थितियों में जहां स्कूलों में कक्षा का आकार अपेक्षाकृत बड़ा होता है, वहीं अध्यापक भी आदर्श अध्यापक नहीं रह गए हैं। उनमें दायित्व बोध की भावना धीरे-धीरे तिरोहित होती जा रही है एवं वह अब अपने विषय में इतना अधिक पारंगत भी नहीं है। साथ-ही गृहकार्य पूरा करने हेतु अथवा किसी भी ज्ञान को स्थाई करने के लिए पाठ्यपुस्तक ही एकमात्र सहारा होती है, अर्थात किसी भी प्रकार का ज्ञान पूर्ण तभी होता है जब कि उसका प्रयोग किया जाए तथा उसका प्रयोग करने के लिए उसे आत्मसात करना आवश्यक है। यह तभी संभव है जब सतत् अभ्यास किया जाए और सतत् अभ्यास के लिए पाठ्यपुस्तक की ही आवश्यकता है। कक्षाकक्ष में दिए जाने वाले ज्ञान की सही प्राप्ति हेतु यह आवश्यक है कि विद्यार्थी अध्यापक की बात को ध्यानपूर्वक सुनें तथा उसे सही प्रकार से नोट कर लें। लेकिन व्यवहार में यह संभव नहीं हो पाता। अतः ऐसी स्थिति में पाठ्यपुस्तक की ही आवश्यकता पड़ती है। शिक्षार्थी के अतिरिक्त अध्यापक को भी पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता होती है क्योंकि कक्षा में किसी प्रकार की जानकारी देने से पहले यह आवश्यक होता है की इस बात से आश्वस्त हो जाना चाहिए

कि जो जानकारी वह कक्षा में देने जा रहा है वह पूर्णता सही एवं स्तरानुकूल है। ऐसी जानकारी उन्हें पाठ्यपुस्तक से ही उपलब्ध हो सकती है।

उपर्युक्त बातें सामाजिक अध्ययन के शिक्षक एवं शिक्षार्थियों पर भी पूर्णता लागू होती है। सामाजिक अध्ययन शिक्षण में पाठ्यपुस्तक की अपेक्षाकृत अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि सामाजिक अध्ययन शिक्षण में जहां एक ओर मानचित्रों की अधिक आवश्यकता होती है, वहीं दूसरी तरफ विभिन्न प्रकार के आंकड़ों की भी बहुतायत होती है, जिन्हें आत्मसात् करने हेतु बार-बार पाठ्यपुस्तक का ही सहारा लिया जाता है तथा उच्च माध्यमिक स्तर से तो सामाजिक अध्ययन शिक्षण के अंतर्गत भूगोल शिक्षण में प्रायोगिक कार्य का शुभारंभ भी हो जाता है। अतः प्रायोगिक कार्य संपन्न करने हेतु पाठ्यपुस्तक की उतनी ही आवश्यकता होती है, जितनी की गणित के प्रश्न हल करने हेतु गणित की पुस्तक की अपरिहार्यता होती है।

सामाजिक विज्ञान अध्ययन की अच्छी पाठ्यवस्तु का चयन

सामाजिक विज्ञान अध्ययन की पुस्तक इस प्रकार की होनी चाहिए जो विद्यार्थियों की सभी प्रकार की आवश्यकताओं को पूर्ण कर सके आज के मनोवैज्ञानिक युग में जिस प्रकार विद्यार्थी की रूचि क्षमता आयु आदि का ध्यान रखना अति आवश्यक है उसी प्रकार सामाजिक अध्ययन की अच्छी पाठ्यपुस्तक का चुनाव करना और भी अधिक दुष्कर कार्य है। अतः पुस्तक के चुनाव हेतु कुछ मानदंडों का निर्धारण आवश्यक है पाठ्यपुस्तकों का उचित स्तर निर्धारित करने हेतु UNESCO द्वारा सन् 1962 में अंतरर्राष्ट्रीय स्तर पर एक जनरल कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया गया तथा उक्त कॉन्फ्रेंस की अभिशंसानुसार कुछ माध्यमिक स्तर से संबंधित पुस्तकें तैयार की गईं। तत्पश्चात वे पाठ्यपुस्तकें भारत आदि कुछ एशियाई राष्ट्रों को मार्गदर्शन हेतु भेजी गई तथा बाद में इस प्रोजेक्ट को अन्य राष्ट्रों में भी लागू करने का प्रयास किया गया। सन 1969 को तत्कालीन केंद्रीय शिक्षा मंत्री के निर्देशन में राष्ट्रीय स्तर पर एक गोष्ठी आयोजित की गई जिसका मुख्य कार्य पाठ्य पुस्तकों के उचित स्तर का निर्धारण करना था। इस गोष्ठी में कुछ निर्णय लिए गए जो निम्नलिखित हैं:-

1. पाठ्यपुस्तकों का एक उचित स्तर होना चाहिए।
2. पाठ्यपुस्तकों के लेखन में व्यापारिक दृष्टिकोण को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए।
3. पाठ्यपुस्तकें विद्यार्थियों के लिए अधिक लाभकारी होना चाहिए।
4. उक्त बातों का ध्यान केंद्र सरकार एवं राज्य सरकार दोनों को सावधानीपूर्वक रखना चाहिए।
5. पाठ्यपुस्तकों के लेखन एवं उचित स्तर को बनाए रखने के लिए केंद्र सरकार द्वारा एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली को भी समुचित मार्गदर्शन देना चाहिए।

एक अच्छी सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तक उसे कहा जा सकता है जो निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर लिखी गई हो:-

1. पुस्तक बालक को केंद्र मानकर लिखी गई हो अर्थात वह बालक की रुचि आयु योग्यता एवं अन्य मनोवैज्ञानिक तथ्यों के अनुकूल होनी चाहिए तथा बालक के दैनिक जीवन से संबंधित होना चाहिए।
2. पाठ्यपुस्तक में मानचित्र एवं चित्रों का यथास्थिति प्रयोग होना चाहिए। मानचित्र सामाजिक अध्ययन विषय के अंतर्गत विशेषकर भूगोल का ज्ञान प्राप्त करने का एक सशक्त साधन है।
3. पाठ्यपुस्तक में ग्राफों एवं डायग्रामों का प्रयोग विभिन्न वस्तुओं स्थानों मौसम आदि को दर्शाने हेतु अति आवश्यक है।
4. पाठ्यपुस्तक में बहु-विकल्पात्मक अभ्यास प्रश्नों का समावेश करना चाहिए ताकि शिक्षार्थियों में विविध प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देने के कौशल का विकास किया जा सके।
5. पाठ्यपुस्तक में नवीनतम सत्य आंकड़ों तथा तथ्यों का समावेश होना चाहिए। साथ-ही नवीन होना चाहिए एवं आंकड़ों का स्रोत विश्वसनीय होना चाहिए।
6. पाठ्यपुस्तक में अंतर्राष्ट्रीय शब्दावली का समुचित प्रयोग करना चाहिए, ताकि शिक्षार्थी उस शब्दावली से अवगत हो सकें और उसे समझ सकें।
7. पाठ्यपुस्तक की भाषा स्पष्ट एवं सरल होनी चाहिए। लंबे एवं कठिन वाक्यों के प्रयोग तथा द्विअर्थी शब्दों का प्रयोग करने से बचना चाहिए। साथ-ही व्याकरण संबंधी नियम का भी पालन किया जाना चाहिए तथा स्थानीय परिवेश से संबंधित शब्दों को उचित स्थान देना चाहिए।
8. पाठ्यपुस्तक में तर्कसंगत एवं क्रमबद्ध प्रकरण होना चाहिए जिसमें विभिन्न प्रकार की राज्यीय राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों एवं मानवीय क्रियाओं के साथ-साथ स्थानीय तत्वों को भी समाहित किया हुआ हो।
9. पाठ्यपुस्तक सीखने की अच्छी एवं नवीन विधियों तथा तकनीक पर आधारित होना चाहिए। साथ-ही पाठ के अंत में सार संक्षेप भी देना चाहिए तथा प्रत्येक प्रकरण या पुस्तक के अंत में उपयोगी पुस्तकों की सूची भी होनी चाहिए।
10. पाठ्यपुस्तक में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एवं भाईचारे को प्रोत्साहन देना चाहिए ताकि विश्व में सभी व्यक्ति शांति से उन्नति एवं समृद्धि की ओर अग्रसर हो सके। पाठ्यपुस्तक इस प्रकार का होना चाहिए कि वह शिक्षार्थियों के समक्ष मानवता, सहयोग एवं प्रेम की भावना का विकास करने में समर्थ हो सके तथा भारत विश्व बंधुत्व की दिशा में सक्रिय सहयोग दे सके।
11. पाठ्यपुस्तक में समय-समय पर सुधार तथा पुनरावृत्ति की संभावना होनी चाहिए ताकि उसमें नवीनतम आंकड़ों एवं तकनीक का समावेश किया जा सके।
12. पाठ्यपुस्तक द्वारा क्षेत्रीय पर्यटन को महत्व देना चाहिए।

13. पाठ्यपुस्तक का आवरण आकर्षक, कलात्मक, प्रभावोत्पादक एवं अच्छी सामग्री से बना टिकाऊ होना चाहिए।

यद्यपि पाठ्यपुस्तक विद्यार्थी के लिए अत्यंत लाभकारी होती है परंतु पुस्तक उद्देश्य प्राप्ति का एक साधन मात्र है, यह साध्य कदापि नहीं हो सकती। पाठ्यपुस्तक पर अधिक निर्भर होने से विद्यार्थी के सामने कई समस्याएं आने की संभावना रहती है, जिनका प्रभाव उनकी ज्ञान प्राप्ति की क्षमता पर भी पड़ सकता है। इसी प्रकार पाठ्यपुस्तक पर अध्यापक की अधिक निर्भरता से न तो अध्यापक स्वयं के बारे में विद्यार्थी पर अच्छा प्रभाव डालने में समर्थ हो पाते हैं और न विषय के बारे में। विद्यार्थी अध्यापक की विषय संबंधी योग्यता को शंका की दृष्टि से देखने लगता है जिसका सीधा प्रभाव उसके सीखने की क्षमता पर पड़ता है। अतः विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों के लिए ही पाठ्यपुस्तक का सावधानीपूर्वक उपयोग करना आवश्यक है।

इकाई–2.3

सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत विभिन्न विषयों के विषय वस्तुओं की समझ

सामाजिक विज्ञान एक विशाल किंतु विशिष्ट शब्द है जिनकी प्रकृति विशाल है यही कारण है कि सामाजिक विज्ञान को स्कूल पाठ्यक्रम में काफी महत्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है यह सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग है। अध्यापक इन्हें पढ़ाते समय इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र को बिना भिन्न–भिन्न विषय के रूप में पढ़ाते हैं। उन्हें कभी भी सामाजिक भौगोलिक व आर्थिक परिस्थितियों से जोड़कर नहीं पढ़ाते। इसी प्रकार एक धारणा यह भी है कि सामाजिक विज्ञान का अर्थ सामाजिक समस्याओं तथा सामयिक घटनाओं का अध्ययन है, जो कि संकुचित अर्थ है।

सामाजिक विज्ञान में वे विषय आते हैं, जिनका संबंध मानव समाज के उद्‌गम और विकास से है। इसके माध्यम से मानव के जीवन और उसके विभिन्न सामाजिक क्रियाकलापों का विस्तार से अध्ययन किया जाता है। सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत निम्नलिखित विषयों का अध्ययन किया जाता है–इतिहास, नागरिकशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, भूगोल, मनोविज्ञान आदि। इसके अंतर्गत मानव जीवन के भूतकालीन, वर्तमान तथा भविष्य का अध्ययन किया जाता है साथ–ही इसके सभी विषयों के आधारभूत सिद्धांतों का अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक विज्ञान :– इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र

इस प्रकार यह एक अंत:अनुशासित विषय है जिस की सामग्री मानव ज्ञान एवं अनुभवों पर आधारित है। वस्तुत: सामाजिक विज्ञान का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है और संपूर्ण विश्व में मानव का वर्तमान सामाजिक जीवन ही इसका मूल है।

सामाजिक विज्ञान का अर्थ, क्षेत्र एवं महत्व:

इसके क्षेत्र के अंतर्गत निम्नलिखित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है:–

1. मानवीय संबंधों का अध्ययन
2. मानव निर्मित संस्थाओं का अध्ययन
3. नागरिकता के गुणों का विकास
4. अंतरराष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन
5. समाज से संबंधित अध्ययन
6. अतीत पर आधारित घटनाओं का अध्ययन
7. प्राकृतिक विज्ञान तथा विकास का अध्ययन

सामाजिक अध्ययन की आवश्यकता

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय समाज में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन हो चुके हैं जिन्होंने सामाजिक अध्ययन की शिक्षा की आवश्यकता प्रदर्शित की है जो निम्नलिखित हैं:-

1. प्रजातांत्रिक शासन की स्थापना
2. औद्योगिक प्रगति एवं वैज्ञानिक आविष्कारों का प्रभाव
3. कल्याणकारी राज्य
4. समाजवादी राज्य
5. सर्वोदय तथा ग्राम पंचायत की व्यवस्था
6. विभिन्न समस्याएं

सामाजिक अध्ययन का महत्व

स्वतंत्रता के पूर्व शिक्षा पूर्णतया पुस्तकीय तथा सूचनात्मक थी। शिक्षा मूल रूप से जीविकोपार्जन के उद्देश्यों से प्रभावित थी। परिणामस्वरूप केवल भाषा, गणित तथा भौतिक विज्ञान की शिक्षा को महत्व प्रदान किया जाता था। सामाजिक विज्ञानों की उपेक्षा की जाती थी क्योंकि उनका कोई व्यवसायिक महत्व नहीं था। आज के युग में सामाजिक अध्ययन के विषयों को महत्वपूर्ण माना जाता है। सामाजिक अध्ययन की शिक्षा के महत्व को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. सामाजिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व
2. वैयक्तिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व
3. सामाजिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व
4. सामाजिक अध्ययन विद्यार्थियों में स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक है।
5. सामाजिक अध्ययन देश की विरासत तथा संस्कृति के लिए प्रेम तथा सम्मान एवं श्रद्धा जागृत करता है।
6. यह सहयोग की भावना विकसित करता है।
7. यह समाज की प्रगति के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।
8. यह समाज में एकरूपता तथा दृढ़ता लाने में सहायता प्रदान करता है।
9. यह सामाजिक जागरूकता तथा अंतरर्राष्ट्रीय सद्भावना के विकास में सहायक है।
10. सामाजिक अध्ययन सामाजिक जीवन को उन्नत, सफल तथा समृद्ध बनाने में अत्यंत उपयोगी है।
11. यह अध्ययन विद्यार्थियों में सहिष्णुता, सहानुभूति तथा प्रेम की भावना विकसित करता है।
12. यह अध्ययन समीक्षात्मक चिंतन की भावना का विकास कर जीवन यापन में सहायता देता है।

13. यह अध्ययन पूर्वाग्रहों, द्वेषों आदि को दूर कर व्यापक दृष्टिकोण के विकास में सहायक है।
14. वैयक्तिक दृष्टि से सामाजिक अध्ययन का महत्व
15. सामाजिक अध्ययन द्वारा व्यक्ति में विभिन्न सामाजिक गुणों यथा सहयोग सहकारिता सहिष्णुता निष्पक्षता आदि का विकास किया जाता है। ये गुण सामाजिक चरित्र के निर्माण में आधार का कार्य करते हैं।
16. सामाजिक अध्ययन द्वारा विभिन्न सामाजिक आदतों तथा कुशलताओं का विकास किया जाता है।
17. इसके द्वारा व्यक्ति की मानसिक शक्तियों का विकास किया जाता है।
18. इस अध्ययन के द्वारा व्यक्ति को व्यवहारिक समस्याओं के समाधान के लिए तैयार किया जाता है।
19. सामाजिक अध्ययन के द्वारा व्यक्ति को अपने वातावरण में व्यवस्थित होने के लिए समर्थ बनाया जाता है।

इसके अतिरिक्त उसमे स्वयं को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने की क्षमता भी प्रदान की जाती है।

समेकन

इस इकाई में हमने जाना कि किस प्रकार सामाजिक विज्ञान के समझ के अंर्तगत विविध सरोकार आते हैं। इस अध्याय के अन्तर्गत हमने जाना कि सामाजिक अघ्ययन को जानने के लिए प्रत्येक स्तर के पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या, पाठ्यपुस्तक एवं स्वधिगम सामग्री, प्रश्न, दत्त कार्य, प्रोजेक्ट आदि को समझना अनिवार्य है। इस अध्याय के अर्न्तगत हमने NCF.2005, BCF-2008 को समझने का कोशिश किया। हमने यह समझा कि विभिन्न विषयों यथा– नागरिकशास्त्र, भूगोल, समाजशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र का समावेशन किस प्रकार है। साथ ही हमने यह भी समझने का कोशिश किया कि भौगोलिक परिस्थितियाँ, यातायात, व्यवसाय, मानवीय एवं आर्थिक जीवन का अध्ययन कैसे किया जा सकता है।

मूल्यांकन

1. उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक पाठयक्रम में किन–किन बिन्दुओ का समावेश किया जाता है। स्पष्ट करें।
2. सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता एवं महत्व का वर्णन करें।
3. सामाजिक विज्ञान एक अंत: अनुशासनिक विषय है, कैसे?

इकाई–3

सामाजिक विज्ञान का शिक्षण

इकाई–3.1

- सामाजिक विज्ञान शिक्षण के आधारभूत सिद्धांत
- सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उपागम
- सामाजिक विज्ञान सीखने की योजना

इकाई–3.2

- शिक्षण में आई.सी.टी. का उपयोग
- कला समेकित शिक्षा

इकाई–3.3

- इतिहासः शिक्षा विधियाँ, तकनीक एवं शिक्षण सामग्रियाँ

इकाई–3.4

- भूगोलः शिक्षण विधियाँ, तकनीक एवं शिक्षण सामग्रियाँ

इकाई–3.5

- राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र के एकीकृत विषय के रूप में सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन
- समेकन
- मूल्यांकन

सामाजिक विज्ञान का शिक्षण

इकाई–3.1

सामाजिक विज्ञानः शिक्षण के आधारभूत सिद्धांत, उपागम तथा सीखने की योजना का स्वरूप

सामाजिक विज्ञान शिक्षण के आधारभूत सिद्धांत

सफल शिक्षण के लिए इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि विद्यार्थी किस प्रकार अथवा कौन–कौन–सी विधियों से सीखते हैं। चूँकि शिक्षण विधियाँ अथवा नीतियाँ कुछ सिद्धान्तों पर आधारित होती हैं, इसलिए प्रत्येक शिक्षक के लिए शिक्षण करते समय इन्हीं सामान्य अथवा आधारभूत सिद्धान्तों का पालन करना परम आवश्यक है।

व्यवहार को नियन्त्रित करने के लिए सिद्धान्तों का होना आवश्यक है। शिक्षक के व्यवहार को नियन्त्रित करने के लिए मुख्य रूप से दो प्रकार के शिक्षण सिद्धान्तों पर बल दिया गया है:–

(अ) शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त (General Principles of Teaching)

(ब) शिक्षण के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त (Psychological Pirnicples of Teaching)

शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त (General Principles of Teaching)

1. **प्रेरणा के सिद्धान्त (Principle of Teaching)**

प्रेरणा वह विधि है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को पाठ्य–सामग्री में रुचि उत्पन्न हो जाये। इस दृष्टि से प्रेरणा के सिद्धान्त का तात्पर्य विद्यार्थियों में ज्ञान प्राप्त करने के लिए रुचि उत्पन्न करना है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जिस समय शिक्षक विद्यार्थियों को ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते हैं तो सीखने और सिखाने की प्रक्रिया सुचारू रूप से सम्पन्न होती रहती है। पर उचित प्रेरणा के अभाव में विद्यार्थी पाठ्य–सामग्री को याद करने में तनिक भी रुचि नहीं लेते। इससे समस्त शिक्षण अधिगम असफल हो जाता है। अतः प्रत्येक शिक्षक को प्रेरणा के सिद्धान्त का पालन करना चाहिए। अब प्रश्न यह उठता है कि विद्यार्थी को ज्ञान प्राप्त करने के लिए किस प्रकार तैयार किया जाये। इसके लिए शिक्षक को विद्यार्थियों की जन्मजात प्रवृत्तियों (Innate Tendencies) का सावधानी के साथ प्रयोग करना चाहिए। यह अनुभव की बात है कि प्रत्येक विद्यार्थी को वातावरण सम्बन्धी नई–नई अनेक बातों का ज्ञान प्राप्त करने की प्रबल जिज्ञासा (Curiosity) होती है। अतः शिक्षक को ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना चाहिए कि प्रत्येक विद्यार्थी में वातावरण सम्बन्धी अधिक से अधिक नई–नई बातों अथवा पाठ्य–सामग्री को जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हो जाये। उदाहरण के लिए इतिहास पढ़ाते समय ताजमहल, उसका मॉडल अथवा चित्र दिखाकर विद्यार्थियों में ताजमहल सम्बन्धी ऐतिहासिक घटनाओं के विषय में ज्ञान प्राप्त

करने की जिज्ञासा उत्पन्न की जा सकती है। कारखानों तथा आर्ट–गैलरियों को दिखाने से विज्ञान तथा कला के प्रति जिज्ञासा विकसित की जा सकती है। ऐसे ही जिज्ञासा तथा आत्म–गौरव की भावनाओं को जाग्रत करते हुए विद्यार्थियों को अन्त्याक्षरी द्वारा कविताओं को कंठस्थ करने की प्रेरणा दी जा सकती है।

2. **क्रियाशीलता अथवा करके सीखने का सिद्धान्त (Principle of Activity or Learning by Doing)**

क्रियाशीलता के सिद्धान्त का यह अर्थ है कि शिक्षक को प्रत्येक प्रकार के पाठ में क्रियाशीलता उत्पन्न करनी चाहिए। स्मरण रहे कि क्रियाशीलता दो प्रकार की होती हैं:– (1) शारीरिक, तथा (2) मानसिक

शारीरिक क्रियाशीलता का अर्थ है।–विद्यार्थियों की कर्मेन्द्रियों को क्रियाशीलता प्रदान करना तथा मानसिक क्रियाशीलता का तात्पर्य विद्यार्थियों की ज्ञानेन्द्रियों को क्रियाशील रखना है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रत्येक विद्यार्थी अपने स्वभाव से ही क्रियाशील होता है। अतः क्रियाशीलता उसकी प्रकृति के अनुरूप है। मैक्डूगल (Mc Doughall) के अनुसार प्रत्येक बालक में रचना (Construction) की जन्मजात प्रवृत्ति होती है। इस प्रवृत्ति के आधार पर बालक प्रायः हर समय कुछ–न–कुछ करता ही रहता है। स्मरण रहे कि बालक की जितनी अधिक क्रिया होगी उतनी ही अधिक सीखने और सिखाने की प्रक्रिया (Learning Teaching Process) होगी। अतः सफल शिक्षण के लिए शिक्षक को विद्यार्थी की रचना तथा अन्य मूल प्रवृत्तियों (Insincts) एवं इन्द्रियों (Senses) का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, शिक्षण के समय विद्यार्थी की मूल प्रवृत्तियों तथा इन्द्रियों का जितना अधिक प्रयोग किया जायेगा शिक्षण भी उतना ही अधिक प्रभावशाली होता जायेगा। ध्यान देने की बात यह है कि शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार की क्रियाशीलताएँ एक–दूसरे पर निर्भर रहती हैं। इसका प्रमाण यह है कि जन्म लेने के कुछ क्षण पश्चात् ही बालक शारीरिक दृष्टि से क्रियाशील होने लगता है तथा जैसे–जैसे वह बड़ा होता जाता है उसकी मानसिक क्रियाशीलता का क्षेत्र भी विस्तृत हो जाता है। चूँकि विद्यार्थी का शरीर और मन दोनों साथ–साथ कार्य करते हैं, इसलिए वह प्रत्येक नई बात को सीखने में अधिक से अधिक रुचि लेता है। प्रसिद्ध शिक्षा–शास्त्री फ्रोबेल (Forebel) ने इसी बात को ध्यान में रखते हुए करके सीखने (Learning by doing) के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया तथा इसी सिद्धान्त के आधार पर अपनी किण्डर–गार्टन पद्धति का प्रतिपादन किया। प्रायः लोग क्रियाशीलता अथवा करके सीखने के सिद्धान्त का अर्थ गलत समझ बैठते हैं। इस सम्बन्ध में यह बात बताने योग्य है कि क्रियाशीलता के सिद्धान्त का अर्थ यह नहीं है कि केवल विद्यार्थी स्वयं ही नई बात को सीखने के लिए क्रियाशील हो अपितु इसका यह अर्थ है कि शिक्षक भी विद्यार्थी को नई–नई बातों को सिखाने के लिए क्रियाशील बनाये। उदाहरण के लिए यदि इतिहास पढ़ाते समय विद्यार्थियों को पुस्तकों की अपेक्षा ऐतिहासिक तथ्यों एवं घटनाओं को नाटक के रूप में दिखाया जाय तो खेल ही खेल में उनको इतिहास के विषय में ज्ञान अधिक सरलता से प्राप्त हो सकता है। ऐसे ही भूगोल पढ़ाते समय मॉडल, चार्ट तथा रेखाचित्रों के प्रयोग अथवा इन सबको स्वयं विद्यार्थियों से बनवाकर भूगोल का ज्ञान प्राप्त करने की रुचि उत्पन्न की जा सकती है। चूँकि क्रियाशील

रहने से विद्यार्थियों में अच्छी-अच्छी भावनाएँ जाग्रत होती हैं तथा उनकी कार्यक्षमता बढ़ती है, इसलिए आधुनिक शिक्षण प्रणालियाँ जैसे- माण्टेसरी प्रणाली (Montessori Method), किन्डर-गार्टन प्रणाली (Kinder-garten Method), अन्वेषण प्रणाली (Hueuristic Method), डाल्टन प्रणाली (Dalton Method), योजना प्रणाली (Project Method) तथा बेसिक प्रणाली (Basic Method) आदि इसी सिद्धान्त पर आधारित हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि क्रियाशीलता का सिद्धान्त अत्यन्त लाभप्रद है। अतः इस सिद्धान्त का प्रयोग प्रत्येक कक्षा के प्रत्येक विषय तथा स्कूल के अन्य सभी कार्यों जैसे-स्कूल परिषद्, वाद-विवाद प्रतियोगिता तथा विभिन्न सभाओं, सोसाइटियों, गोष्ठियों, क्लबों एवं खेलकूद आदि में होना चाहिए। इससे विद्यार्थियों में प्रशासनीय आदतों का विकास होगा तथा उन्हें समाज-सेवा का पर्याप्त एवं उचित प्रशिक्षण मिलेगा।

3. **रुचि का सिद्धान्त (Principle of Interest)**

रुचि के सिद्धान्त का अर्थ यह है कि शिक्षण को उपयोगी तथा प्रभावशाली बनाने के लिए विद्यार्थी की पाठ्य-विषय में रुचि उत्पन्न की जाय। जब विद्यार्थी को पाठ्य-विषय में रुचि उत्पन्न हो जाती है तो वह ज्ञान को सरलतापूर्वक ग्रहण कर लेता है।

4. **जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का सिद्धान्त (Principle of Linking with life)**

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रत्येक स्तर के विद्यार्थी की अपनी-अपनी दुनियाँ अलग-अलग होती है। दूसरे शब्दों में जैसे-जैसे विद्यार्थी बड़ा होता जाता है वैसे-वैसे वह अपने ढंग से नई दुनियाँ की कल्पना करना आरम्भ कर देता है। इस प्रकार प्रत्येक विद्यार्थी केवल उन क्रियाओं अथवा विषयों में ही अधिक रुचि लेता है जिनका उसकी अपनी निजी, दुनिया से सम्बन्ध होता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए आधुनिक युग में शिक्षण करते समय क्रिया अथवा विषय को सीखने वाले के जीवन से सम्बन्धित किया जाता है। अतः जीवन से सम्बन्धित जोड़ने के सिद्धान्त का तात्पर्य यह है कि पाठ्य-सामग्री को विद्यार्थियों के जीवन से संबंधित किया जाय।

5. **निश्चित उद्देश्य का सिद्धान्त (Principle of Definite Aim)**

इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि प्रत्येक पाठ का कोई न कोई निश्चित लक्ष्य अथवा उद्देश्य अवश्य होना चाहिए। उद्देश्य के अभाव में "शिक्षक उस नाविक के समान है जिसे अपने लक्ष्य का ज्ञान नहीं तथा सीखने वाला विद्यार्थी उस पतवार विहीन नौका के समान है जो समुद्र की लहरों के थपेड़ों खाती हुई बह रही है।" इस दृष्टि से पाठ को रोचक तथा प्रभावशाली बनाने के लिए कोई न कोई निश्चित, स्पष्ट तथा पूर्ण परिभाषित उद्देश्य अवश्य होना चाहिए। स्मरण रहे कि उद्देश्य तथा शिक्षण-पद्धति का गहरा सम्बन्ध होता है।

6. **वैयक्तिक भिन्नता को जाग्रत करने का सिद्धान्त (Principle of Recognizing Individual Differences)**

इस सिद्धान्त का अर्थ यह हे कि शिक्षण के समय विद्यार्थियों की विभिन्नताओं का ध्यान रखा जाय। मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक विद्यार्थी बुद्धि,

स्वभाव, योग्यता तथा रुचियों, क्षमताओं एवं आवश्यकताओं में एक-सा नहीं होता। यही कारण है कि प्रत्येक विद्यार्थी एक ही स्तर पर नहीं होता। इस दृष्टि से सभी विद्यार्थियों के विकास हेतु समान अवसर प्रदान करने के लिए शिक्षक को योग्य विद्यार्थियों को आगे बढ़ने के लिए उचित निर्देश देना चाहिए।

7. **चयन का सिद्धान्त (Principle of Selection)**

पाठ्य-वस्तु के चयन का सिद्धान्त एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त पर प्रकाश डालने से पहले हम यह बताना चाहते हैं कि पाठ्य-वस्तु का शिक्षा के उद्देश्य से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। दूसरे शब्दों, जैसे उद्देश्य होता है उसी के अनुसार पाठ्य-वस्तु चुन ली जाती है। अब पाठ्य-वस्तु के सम्बन्ध में यह बात जान लेना परम आवश्यक है कि जब से मानव ने इस भूमि पर जन्म लिया है तभी से उसने इस जटिल संसार के सम्बन्ध में अत्यन्त विस्तृत ज्ञान संचित कर लिया है।

8. **नियोजन का सिद्धान्त (Principle of Planning)**

शिक्षण को सफल बनाने के लिए नियोजन के सिद्धान्त का पालन करना परम आवश्यक है। इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि शिक्षक को शिक्षण करने से पहले ही शिक्षण के क्रम को निश्चित तथा व्यवस्थित करके पाठ की योजना तैयार कर लेनी चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षक को पाठ की योजना तैयार करते समय यह पहले से ही सोच लेना चाहिए कि वह विद्यार्थियों से किस स्तर पर कितना सहयोग प्राप्त करके किसी समस्या को कौन-सी विधि से हल करेगा।

9. **विभाजन का सिद्धान्त (Principle of Division)**

इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि पाठ्य-सामग्री को निश्चित क्रम से प्रस्तुत करने के लिए कुछ पंक्तियों अथवा पदों (Units) में बाँट लेना चाहिए। पाठ्य-सामग्री को बाँटने के पश्चात् इन पदों अथवा सोपानों को विद्यार्थियों के समक्ष इस प्रकार से प्रस्तुत करना चाहिए कि प्रत्येक सोपान अपने में पूर्ण भी हो तथा एक सोपान दूसरे सोपान पर स्वाभाविक रूप से पहुँचाने की जिज्ञासा भी उत्पन्न कर दे।

10. **आवृत्ति का सिद्धान्त (Principle of Revision)**

इस सिद्धान्त का आशय यह है कि विद्यार्थियों को जो भी पाठ्य-सामग्री पढ़ाई जाय उसे विद्यार्थियों से बार-बार दोहराया जाय।

11. **निर्माण तथा मनोरंजन का सिद्धान्त (Principle of Democratic Dealing)**

इस सिद्धान्त का तात्पर्य यह है कि विद्यार्थियों से ऐसी क्रियाएँ कराई जायें जो मनोरंजनपूर्ण हों तथा उनकी सृजनात्मक शक्ति का उचित विकास कर सकें।

12. **जनतन्त्रीय व्यवहार का सिद्धान्त (Principle of Democratic Dealing)**

जनतन्त्रीय सिद्धान्त के अनुसार शिक्षक को विद्यार्थियों के साथ जनतन्त्रीय दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, तानाशाही नहीं। तानाशाही व्यवस्था में विद्यार्थी के व्यक्तित्व का दमन हो जाता है। इससे वे कभी-कभी विद्रोह भी कर बैठते हैं।

- **सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उपागम**

ज्ञान सभी विषयों का समग्र रूप है। बालक के विकास पर सभी विषयों का प्रभाव समन्वित रूप में होता है। बालक के ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक पक्षों के विकास का प्रभाव उस पर व्यक्तिगत रूप से पड़ता है। संपूर्ण शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में विद्यार्थी, शिक्षक एवं पाठ्यवस्तु सम्मिलित होकर शिक्षण अधिगम उपागम का निर्माण करते हैं।

सामाजिक विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उपागम हैं-

1. **व्यवहारवादी उपागम**

इसके प्रतिपादक वाटसन महोदय हैं। उनके अनुसार, व्यवहार का अध्ययन ही मनोविज्ञान का असली विषय-वस्तु है। सीखना व्यवहार का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। व्यक्ति का व्यवहार केवल उसकी भीतरी और निजी अनुभूतियों पर आधारित नहीं होता बल्कि वह अपने माहौल से भी निर्देशित होता है। किसी की मानसिक स्थिति का पता लगाने के लिए बाह्य उत्प्रेरक के प्रति व्यक्ति की अनुक्रिया का परीक्षण करना काफी होता है। यह उपागम मनोविकारों से छुटकारा दिलाने में सहायक होता है।

2. **संज्ञानवादी उपागम**

इसके प्रतिपादक जीन पियाजे हैं। उनके अनुसार सीखना उस समय ज्यादा अर्थ-पूर्ण होता है जब वह विद्यार्थी की रूचि और जिज्ञासा के अनुरूप हो। संज्ञान का अर्थ है जानना। हमारी इंद्रियों के माध्यम से हम वाह्य जगत को जानने समझने की जो कोशिश करते हैं उसे ही संज्ञान कहते हैं। संज्ञानवाद के अनुसार, व्यक्ति अपने वातावरण एवं परिवेश के साथ मानसिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए सीखता है। पियाजे का मानना है कि संज्ञानात्मक विकास अनुकरण की बजाय खोज पर आधारित है। इसमें व्यक्ति अपनी ज्ञानेंद्रियों के प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर अपनी समझ का निर्माण करता है। उदाहरण के तौर पर जब कोई बच्चा जलते हुए दीपक को जिज्ञासावश छूता है तो उसे जलने के बाद एहसास होता है कि वह तो डरावनी चीज है, इससे दूर रहना चाहिए। इस प्रकार संज्ञानवादी उपागम बालक के अनुभाविक संसार एवं उसमें निरंतर सुधारों पर आधारित है।

3. **बालकेंद्रित उपागम**

बाल-केंद्रित उपागम का तात्पर्य बालक की रुचियों, प्रवृत्तियों, योग्यताओं तथा क्षमताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान करना है। अर्थात इसमें शैक्षिक प्रक्रिया का संचालन बालक को केंद्र में रखकर किया जाता है। बालक का सीखना उसकी मूलभूत क्षमताओं, चिंतन, मनन, तर्क, स्मरण, कल्पना, इन्द्रिय-प्रत्यक्षीकरण आदि पर निर्भर करता है। बालक अपने परिवेश की प्रत्येक वस्तु एवं घटना का ध्यान पूर्वक अवलोकन करता है तथा हर समय

कुछ–न–कुछ सीखता रहता है। बालक के पास अपनी कुछ जन्मजात प्रतिभा एवं योग्यता होती है। अतः बालक को शिक्षा का मूल आधार मानते हुए उसे शिक्षा के केंद्र में रखकर शिक्षक को मार्गदर्शक, परामर्शदाता एवं मित्र की भूमिका में बालक के शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए। बाल केंद्रित उपागम बालकों में स्वतंत्र चिंतन और जिज्ञासा को जागृत करता है तथा समस्या समाधान कौशल का विकास करता है।

4. संरचनावादी उपागम

इसके प्रतिपादक विलियम वुण्ट हैं। संरचनावादी उपागम के अनुसार, बालक का पूर्व ज्ञान नए ज्ञान की संरचना करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बालक की स्मरणशक्ति ज्ञान की संरचना करने का आधार होता है। विद्यार्थी जब कक्षा में समूह में कार्य करते हैं तो वे अपने पुराने अनुभवों को नए अनुभवों से जोड़ते हैं, जिसमें शिक्षक की भूमिका एक सहायक के रूप में होती है। समूह में कार्य करते हुए एक–दूसरे के विचारों का आदान–प्रदान होता है। इस प्रकार संपूर्ण शिक्षण प्रक्रिया ज्ञान सृजन के उद्देश्यों पर आधारित होती है। संरचनावाद एक ऐसी पहल है जिसमें सामाजिक संरचना, अवरोध और अवसरों को अधिक स्पष्ट तौर पर देखा जाना चाहिए। यह सांस्कृतिक मानदंडों या अन्य व्यक्तिपरक चीजों की तुलना में मानव व्यवहार पर अधिक प्रभाव डालता है।

5. अंर्तविषयक उपागम

सामाजिक विज्ञान शिक्षण एक अंर्तविषयक उपागम है जिसमें एक विषय का संबंध सामाजिक विज्ञान के अन्य विषयों तथा अन्य क्षेत्रों के विषयों जैसे – भौतिकी शास्त्र, भाषा अध्ययन, जीव विज्ञान आदि के साथ संबंध रखता है। अंतर्विषयक उपागम दो या दो से अधिक विषय क्षेत्रों को जोड़ता है जैसे, इतिहास और भूगोल को जोड़कर एक अलग विषय बनता है ऐतिहासिक भूगोल। इस नए विषय में दो भिन्न–भिन्न विद्या शाखाओं के मुख्य हिस्से मिलकर एक हो जाते हैं। इस उपागम में कई विद्या शाखाओं की संकल्पनाओं, जिज्ञासाओं और प्रणालियों का लाभ एक साथ उठाया जाता है। अलग–अलग कक्षा में अलग–अलग विषय पढ़ाते समय शिक्षक अपने विषय में बहुत सारे विषयों की सूचनाएं और दृष्टिकोण पेश करते हैं।

6. एकीकृत उपागम

यह सामाजिक विज्ञान शिक्षण को व्यवस्थित करने वाला प्रमुख उपागम है जो मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन की परिवर्तनशील प्रकृति के अनुकूल है। चूंकि ज्ञान का पूर्ण रूप से विभाजन करना असंभव है। अतः बालकों को एकात्मक रूप से ज्ञान प्रदान करना बेहतर है। इस उपागम में सामाजिक विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के विषयों जैसे इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र इत्यादि को शिक्षण–अधिगम या अन्य उद्देश्यों के लिए एकीकृत कर विद्यार्थियों के मानसिक विकास के अनुरूप ढाला जाता है। विद्यालय स्तर पर विद्यार्थियों को सामाजिक विज्ञान पढ़ाने के लिए पाठ्यचर्या में इतिहास, भूगोल, सामाजिक और राजनीतिक जीवन आदि विषय वस्तु समावेशित कर एकीकृत रूप में व्यवस्थित किया जाता है।

7. मनोवैज्ञानिक उपागम

मनोवैज्ञानिक उपागम सामाजिक विज्ञान को निर्माण एवं संरचना की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक घटनाओं के रूप में परिभाषित करता है। इस उपागम के अनुसार, मानव के सामाजिक कार्य अनेक मनोवैज्ञानिक तथ्यों जैसे – व्यक्तित्व, भाव, प्रेरणा आदि द्वारा मार्गदर्शित होते हैं।

8. तुलनात्मक उपागम

तुलनात्मक उपागम सामाजिक घटना पर तर्कपूर्ण सिद्धांत का उपयोग कर उन तथ्यों तक पहुंचता है जो आवश्यक हैं। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में तुलनात्मक उपागम में एक उचित सामान्यीकरण तक पहुंचने के क्रम में चुनाव, तुलना और विलुप्तिकरण की प्रक्रिया के द्वारा प्राचीन या वर्तमान समाज एवं सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन किया जाता है। यह उपागम दो या दो से अधिक घटनाओं के बीच संबंध स्थापित कर यह प्रदर्शित करता है कि कैसे कुछ निश्चित घटनाएं लगातार एक–दूसरे से संबंधित होती हैं या क्रमिक रूप से लगातार घटित होती हैं।

9. ऐतिहासिक उपागम

ऐतिहासिक उपागम में भूतकाल एवं वर्तमान काल का अध्ययन किया जाता है, जिससे हमारे वर्तमान जीवन के तरीकों के लिए अर्थ प्राप्त होता है। यह उपागम दो तरीकों का अनुकरण करता है।

- यह जीव विज्ञानी सिद्धांत के द्वारा प्रतिपादित है जो समाज के विकास एवं उत्पत्ति से संबंधित विचारों पर आधारित है।
- अर्थशास्त्र की व्याख्या द्वारा प्रभावित है जो पूंजीवाद पर आधारित है।

10. दार्शनिक उपागम

यह उपागम चिंतन तथा मानदंड संबंधी उपागम है। यह अवलोकन के द्वारा निष्कर्षित अतिव्यापक उपागम है। अनेक सामाजिक अध्ययनकर्ता सामाजिक मूल्यों एवं अवधारणाओं तक निगमनात्मक तार्किकता के द्वारा सामाजिक–व्यवहार, सामाजिक–व्यवस्था निर्माण आदि के प्रमाणिक निष्कर्ष तक पहुंचे हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में शिक्षक, विद्यार्थी एवं पाठ्यवस्तु सम्मिलित रूप से शिक्षण उपागम का निर्माण करते हैं। प्रत्येक उपागम की उपयोगिता या सीमाएं होती हैं, जो इस बात पर निर्भर करती है कि हमारी शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने में यह किस प्रकार सहायता करते हैं।

- **सामाजिक विज्ञान सीखने की योजना (Learning Plan)**

अधिगम–योजना की आवश्यकता एवं महत्त्व

1. लक्ष्यों एवं प्राप्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुऐ कक्षा का संचालन किया जा सके।

2. संभावित समस्याओं का सामाधान हल किया जा सके।
3. पूर्व ज्ञान के आधार पर नवीन ज्ञान प्रस्तुत किया जा सके।
4. शिक्षण कार्य को रोचक एवं प्रभावी बनाया जा सके।
5. विद्यार्थियों की सक्रियता को बरकरार रखा जा सके।
6. ज्ञानार्जन की प्रक्रिया स्थायी एवं ठोस हो सके।

उद्देश्य – इस इकाई पर आधारित विषय वस्तु के शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. सामाजिक विज्ञान के शिक्षण के आधारभूत सिद्धांतों, उपागमों तथा सिखने की योजना (Learning Plan) जैसे कौशल विकसित करना।
2. इतिहास एवं भूगोल जैसे विषयों के शिक्षण विधियों, तकनीकों एवं उपयोग किये जाने वाले शिक्षण सामग्रियों का निर्माण एवं उपयोग करने की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन से संबंधित जुड़ाव की समझ विकसित करना।
3. शिक्षण की प्रक्रिया की सुगमता, प्रभावशीलता एवं रोचकता को कायम रखने के लिए आई.सी.टी तथा कला का समेकित उपयोग करने की कुशलता विकसित करना।

सीखने की योजना का स्वरूप

1. निर्धारित कक्षा के चयनित विषय का पाठ्यक्रम एवं प्रचलित पाठ्यपुस्तक का अध्ययन।
2. पाठ्यपुस्तक के आधार पर शिक्षण/अधिगम बिन्दु का चयन।
3. एक घंटी हेतु उपर्युक्त विषयवस्तु का निर्धारण
4. शिक्षण उद्देश्यों का चयन (To know, To feel, to do)
5. शिक्षण विधि-प्रविधियों का निर्णय
6. विभिन्न क्रियाकलापों का चयन
7. उपर्युक्त शिक्षण-अधिगम सामग्रियों का चयन एवं उपयोग की रणनीति का निर्धारण
8. शिक्षार्थियों से अंत:क्रिया हेतु प्रश्न, समूह कार्य, मानसिक जाँच आदि।
9. वास्तविक शिक्षण हेतु क्रमबद्ध योजना
10. सतत् एवं व्यापक आकलन के उपाय
11. वर्ग-कक्ष शिक्षण को रोचक, जिज्ञासु, सरस, बोधगम्य, चुनौतीपूर्ण, समस्या-समाधानपरक चिंतन, अभिव्यक्ति, सहयोग, सक्रियता आदि के पर्याप्त अवसर के सृजन पर ध्यान देने की मानसिक योजना
12. शिक्षक-साथी एवं अपने शिक्षक से आवश्यक परामर्श।

शिक्षण–अधिगम योजना सं०....................

खंड–1

कक्षाः .... तिथिः.................

विषयः .... घंटीः...............................

प्रकरणः............................... अवधिः..............................

- प्रमुख शिक्षण–अधिगम बिन्दुः
- उद्देश्यः

(1)

(2)

(3)

- शिक्षण विधि–प्रविधि
- शिक्षण–अधिगम सामग्री

खंड–2 अन्तःक्रियात्मक अवस्था (Interactive Phase)

शिक्षण के चरण	विधि–प्रविधि	प्रशिक्षु की गतिविधि	शिक्षार्थी गतिविधि	श्यामपट्ट कार्य	स्तत् एवं व्यापक आकलन
प्रस्तावना					
उद्देश्य कथन					
प्रस्तुतीकरण					
सामान्यीकरण					
पुनरावृत्ति					

खंड–3

- **मूल्यांकनः**

  1.

  2.

  3.

  समीक्षाः

  योजनानुसार वास्तविक कक्षा शिक्षण में क्या कोई बदलाव हुआ? अगर हाँ तो क्या? अगर नहीं तो क्यों?

इकाई–3.2

शिक्षण में आई.सी.टी तथा कला समेकन का उपयोग

आई.सी.टी की मदद से सूचना और संचार विषय के वातावरण के बीच सूचना का आदान–प्रदान तेज होता है, परिणाम एक अधिक प्रभावी सीखने के मॉडल का गठन होता है। पाठ में कला समेकन का उपयोग आवश्यक है। यह समय की आवश्यकता है, जो पाठ को रोचक बनाने के साथ–साथ उसमें विविधता लाता है। शिक्षण में आई.सी.टी. तथा कला समेकन का उपयोग विद्यार्थियों को सक्रिय बनाकर सीखने सिखाने की प्रक्रिया को और अधिक प्रभावी और तेज बनाता है।

- **शिक्षण में आई.सी.टी का उपयोग**

सूचना एवं संचार तकनीकी या सूचना तथा संप्रेषण प्रौद्योगिकी को आमतौर पर आई.सी.टी. (ICT) कहा जाता है। आई.सी.टी. में आई.टी. (IT) के साथ–साथ दूरभाष संचार प्रसारण मीडिया और सभी प्रकार के ऑडियो और वीडियो प्रक्रम एवं प्रेषण शामिल होते हैं।

शिक्षा एवं शिक्षण में आई.सी.टी. (ICT) का उपयोग पारंपरिक तरीकों के शिक्षण–पद्धतियों में संवर्धन, प्रचलित शैक्षणिक पद्धतियों के सुदृढ़ीकरण और शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के बीच संवाद के तरीकों को सुदृढ़ करने के लिए किया जाता है। आई.सी.टी. की सहायता से शिक्षा का विशेष रूप से प्रचार प्रसार हुआ है। इसका उपयोग शिक्षा संबंधी अनेक समस्याओं के समाधान में सहायक होता है। उपग्रहों की मदद से चलने वाले रेडियो, टेलीविजन के अनेक शैक्षणिक कार्यक्रम देश के सुदूर क्षेत्र तक पहुंचने में सफल हुए हैं। शिक्षक और विद्यार्थी कंप्यूटर तथा इंटरनेट के माध्यम से कई शैक्षणिक कार्यक्रमों के लाभ उठा रहे हैं।

आई.सी.टी. के प्रयोग से विद्यार्थियों तथा शिक्षकों की प्रेषण क्षमता, ग्रहण क्षमता तथा योग्यताओं में सार्थक एवं रचनात्मक सुधार आया है। आई.सी.टी. ने पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधियाँ, कक्षागत परिस्थितियों एवं शिक्षा के राष्ट्रीय एवं सामाजिक सरोकार के परिप्रेक्ष्य में अनुकूल परिवर्तन ला दिया है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने कक्षा एवं कक्षा के बाहर शिक्षण अनुदेशन में प्रयुक्त होने वाले साधनों के अतिरिक्त वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोग का विस्तार किया है। इससे शिक्षक एवं शिक्षाविद पाठ्यसामग्री, पाठ नियोजन, पाठ संकेत, शिक्षण विधियों, अनुदेशनात्मक परिवेश, आकलन विधियाँ, परीक्षा एवं अनुश्रवण विधियों में तकनीक को सम्मिलित कर उनमें सुधार ला रहे हैं। इस दृष्टिकोण से शिक्षा संस्थाओं के वर्क–कक्ष कार्यालय पुस्तकालय प्रयोगशाला खेल के मैदान आदि में आईसीटी ने तीव्रता से प्रवेश किया है जिसके निम्नलिखित उपयोग हैं:–

1. कक्षा शिक्षण के लिए रेडियो, दूरदर्शन प्रसारण, सी.डी कैसेट, डी.वी.डी, कंप्यूटर आदि का व्यापक प्रयोग के रूप में।
2. सीखने के क्रियाकलापों के पर्यवेक्षण तथा प्रतिपुष्टि हेतु विद्यार्थियों के मूल्यांकन हेतु उपर्युक्त उपकरण के रूप में।

3. विद्यार्थी विचार-विमर्श, सामूहिक अधिगम, वैयक्तिक अधिगम तथा अनुसंधान हेतु नवीन शिक्षण विधियों के उपकरण के रूप में।
4. विद्यार्थियों को अधिमत कराने तथा विचारों को उद्वेलित कराने का अभिप्रेरणा प्रदान करने के साधन के रूप में।
5. शिक्षण-अधिगम सामग्री स्थानापन्न के रूप में।
6. चाक-बोर्ड के विकल्प के रूप में।

इस प्रकार आई.सी.टी. शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का एक अपरिहार्य अंग बन गया है।

शिक्षा एवं शिक्षण में आईसीटी के उपयोग का लाभ-

1. शिक्षक के गुणात्मक योग्यता का विस्तार
2. सीखने की योजना को प्रभावशाली बनाना
3. विद्यार्थियों के ज्ञान एवं अनुभव में सहायक
4. निर्देशन प्रदान करना
5. शिक्षण में विभिन्न विद्याओं एवं साधनों का प्रयोग
6. विद्यार्थियों की सक्रिय भागीदारी
7. उपचारात्मक शिक्षण तथा शोध में सहायक
8. व्यक्तिगत निर्देशन में सहायक
9. शिक्षण को प्रभावी बनाना
10. शिक्षा को सर्व सुलभ बनाना
11. शिक्षा के समान अवसर प्रदान करना
12. सेवारत शिक्षकों एवं कर्मचारियों के लिए उपयुक्त एवं उपलब्ध
13. ज्ञान को स्थायित्व प्रदान करना
14. उपाधियाँ प्राप्त करने में सहायक।

इस प्रकार सूचना एवं संचार तकनीकी शिक्षकों की कार्यकुशलता में वृद्धि कर शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को रोचक, सरल एवं प्रभावी बनाता है, जिससे विद्यार्थियों की शिक्षण-अधिगम की क्षमता बढ़ाता है। आई.सी.टी. की मदद से सूचना और संचार विषय के वातावरण के बीच सूचना का आदान-प्रदान तेज होता है। परिणामस्वरूप एक अधिक प्रभावी सीखने के मॉडल का गठन होता है। शिक्षा में 'आई.सी.टी.' प्रौद्योगिकियों का उपयोग आवश्यक है। यह समय की आवश्यकता है, जो पाठ में विविधता लाता है। यह शिक्षा की संरचना एवं उसकी प्रकृति को स्पष्ट करके शिक्षक को अनुसंधान के लिए प्रेरित करता है, जिससे उनके गुणात्मक क्षमता में वृद्धि होती है। यह शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के शिक्षा संबंधी अनेक समस्याओं का उचित समाधान ढूंढने में सहायता प्रदान करती है।

कला समेकित शिक्षा

विभिन्न पाठ्यक्रम क्षेत्रों की विषय वस्तु के सीखने-सिखाने के साथ कला को जोड़ देना ही कला समेकित शिक्षा है। कला समेकित शिक्षा अनुभवात्मक अधिगम का एक शैक्षणिक तरीका है। यह शिक्षा कला का अन्य विषयों के साथ एकीकरण करती है। यह विभिन्न

प्रकार की कलाएं जैसे दृश्य कला, प्रदर्शन कला और साहित्य कला शिक्षण–अधिगम या सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं का एक अभिन्न अंग बनकर शिक्षण को रोचक और मजेदार बनाती है।

कला समेकित शिक्षा पाठ्यक्रम को भी कला समेकित बनाती है, जिसमें कला कक्षा कक्ष में सीखने का आधार बन जाती है। भाषा सामाजिक अध्ययन विज्ञान और गणित जैसे विषयों को कला के साथ परस्पर संबंधित करने के लिए तैयार किया जा सकता है। कई बार कला बहुत सरलता से विज्ञान की अवधारणा को स्पष्ट कर सकती है। इस प्रकार विषयों की अमूर्त अवधारणाओं को विभिन्न कला रूपों का उपयोग करके समझने में आसान और मूर्त रूप दिया जा सकता है। सीखने के इस तरीके से विषय के बारे में ज्ञान और समझ को बढ़ाने में मदद मिलती है और यह कला का मूल्यांकन करने को भी बढ़ावा देता है।

यदि पाठ्यक्रम में कला का समावेश हो तो इससे विशेष रूप से अमूर्त अवधारणाओं को स्पष्ट करने में मदद मिलती है। कला समेकित पाठ्यक्रम में विभिन्न विषयों विषय–वस्तु को तार्किक, छात्र-केंद्रित और अर्थपूर्ण तरीकों से जोड़ने के साधन प्रदान कर सकता है। कला को केंद्र बिंदु में रखकर गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान तथा भाषाओं और उनकी अमूर्त अवधारणाओं के बीच एक संबंध स्थापित किया जा सकता है तथा उसे आपस में जोड़कर विषय–वस्तु को प्रभावी ढंग से सिखाया जा सकता है। इस तरीके से सीखना समग्र आनंददायक और अनुभव आत्मक बन जाता है।

कला समेकित शिक्षा से सीखने–सिखाने के तरीकों को सरल एवं प्रभावी बनाया जा सकता है। कला का सतत एवं व्यापक मूल्यांकन कौशल और उपकरणों के रूप में कर सकते हैं। विद्यार्थी कई बार अपने विचारों को मौखिक रूप में बयान नहीं कर सकते तो उस समय उनको अपने मनोभावों को प्रकट करने के लिए कला का सहारा देकर सीखने सिखाने की प्रक्रिया को बेहतर बनाया जा सकता है।

नई शिक्षा नीति 2020 में इस कला समेकित शिक्षण द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए ध्यान दिया गया है।

यदि हमारे विद्यालय में सीखने सिखाने की प्रक्रिया में कला समेकित शिक्षा का समावेश हो जाए तो यह न सिर्फ बच्चों के लिए रुचिकर होगा, बल्कि शिक्षक-शिक्षिकाओं के लिए भी उनकी कक्षा बाल–केंद्रित एवं आनंददायक बन जाएगी।

कला अभिव्यक्ति के लिए एक भाषा प्रदान करती है। यह अभिव्यक्ति कला के दृश्य जैसे – पेंटिंग, फोटोग्राफी, मूर्तिकला या प्रदर्शन रूप जैसे – नृत्य, संगीत, रंगमंच जादू का प्रदर्शन आदि में हो सकता है। कला समेकित शिक्षा में कला को पाठ्यक्रम का मुख्य हिस्सा मानते हुए काम किया जाता है। विभिन्न कला रूपों का उपयोग करके विषय–वस्तु की अमूर्त अवधारणाओं का पता लगाया जा सकता है। कला समेकित कक्षाएँ सीखने के ऐसे अनुभव प्रदान करती है जिससे सीखने वाले का मन और शरीर उससे जुड़ जाता है।

इस तरह कलाएं बच्चों को कई तरह के कौशल और क्षमताओं का उपयोग करने में सक्षम बनाती हैं।

कला समेकित शिक्षा भाषा, सामाजिक अध्ययन, विज्ञान एवं गणित जैसे विषय को कला के विभिन्न रुपों से जोड़ती है, जिससे बालक अवलोकन करना, विचार करना, कल्पना करना, खोज करना, प्रयोग करना, तर्क द्वारा निर्णय पर पहुंचना, सृजन करना, व्यक्त करना आदि विभिन्न चरणों से गुजरते हैं। इस प्रकार सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को समग्र एवं अनुभवात्मक बनाने में कला समेकित शिक्षा की अभूतपूर्व भूमिका है।

इकाई–3.3

इतिहास : शिक्षण विधियां, तकनीक एवं शिक्षण सामग्रियाँ

इतिहास का अर्थ

इतिहास का शिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि इतिहास क्या है? इतिहास की शिक्षा में क्या उपयोगिता है? इतिहास सामाजिक जीवन का एक आवश्यक अंग है। समाज की रचना में इतिहास का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इतिहास का जन्म मनुष्य के इस पृथ्वी पर प्रादुर्भाव के समय से ही माना जाता है। भारतीय परम्परा के अनुसार 'इतिहास शब्द का अर्थ 'ऐसा ही हुआ' माना जाता है। अंग्रेजी भाषा में इसके लिए 'History' ग्रीक शब्द 'हिस्टोरिया' से लिया गया है, जिसका अर्थ है, 'वास्तविक अर्थ में क्या घटित हुआ है?' अर्थात् सार्वजनिक घटनाओं का एक क्रमबद्ध लेखा, जिसमें तीन विशेषताएँ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं:–

1. इसमें सार्वजनिक घटनाओं का लेखा रहता है।
2. यह घटनाएँ निरन्तर होती रहती है।
3. इन घटनाओं का वर्णन इस प्रकार से किया जाता है।

आधुनिक इतिहासशास्त्री इतिहास को मानव–जीवन के उद्विकास की कहानी मानते हैं। विकास की यह कहानी अति प्राचीनकाल से चली आ रही है, जिसके द्वारा मानव–सभ्यता के क्रमबद्ध विकास का दिग्दर्शन होती है।

इतिहास शिक्षण का महत्त्व (Importance of Teaching History)

अंग्रेजी शासनकाल में भारतीय जीवन में इतिहास का कोई व्यावहारिक महत्त्व नहीं था, क्योंकि उस समय प्रत्येक स्तर पर भारतीय इतिहास के साथ इंग्लैण्ड का इतिहास भी पढ़ाया जाता था, किन्तु आज की बदलती हुई परिस्थिति ने इतिहास के महत्त्व को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित प्रकार से निरूपित किया जा सकता है–

1. **जीवन में सहायक** – इतिहास सामाजिक वातावरण पर प्रकाश डालता है।
2. **ज्ञान वृद्धि का साधन** – इतिहास के अध्ययन द्वारा विद्यार्थी विभिन्न राष्ट्रों, समाजों, संस्कृतियों, परम्पराओं तथा संस्थाओं का ज्ञान प्राप्त होता है।
3. **मानसिक परिपक्वता** – ऐतिहासिक तथ्यों को याद करने से विद्यार्थी की स्मरण शक्ति का विकास होता है।
4. **खुशहाल जीवन** – इतिहास का अध्ययन विद्यार्थी को इस योग्य बनाता है कि वह अपनी समसामयिक समस्याओं को भली प्रकार समझ सकें।
5. **व्यापक दृष्टिकोण का विकास** – इतिहास–शिक्षण के द्वारा विद्यार्थी में भावात्मक और राष्ट्रीय एकता का विकास किया जा सकता है।

6. **व्यावहारिक जीवन में उपयोगिता** – वर्तमान में हमारे सामने प्रमुख समस्या जीविका-निर्वाह की है। इतिहास का अध्ययन इस समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है।

उपर्युक्त विवेचन से इतिहास का शिक्षण में महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। लेकिन अधिकांशतः इसके महत्त्व से इसलिए अपरिचित हैं, क्योंकि इतिहास के शिक्षण के उद्देश्य और मूल्यों को वे एक ही समझते हैं। इस भ्रम को दूर करने के लिए यह समझना आवश्यक है कि उद्देश्य एक चेतन-लक्ष्य है। किसी कार्य को आरम्भ करने से पूर्व एवं कार्य करते समय लक्ष्य को सामने रखते हैं। लक्ष्य को सम्मुख रखते हुए कार्य करने में जो फल प्राप्त होता है, वह मूल्य है। व्यावहारिक रूप में यह भी सम्भव है कि हम अपने सामने एक लक्ष्य रखें परन्तु उनमें हमें कई अनुभवों की प्राप्ति हो।

इतिहास शिक्षण की विभिन्न विधियाँ (Various Methods of Teaching History)

किसी भी विषय को प्रभावशाली, बोधगम्य तथा रुचिकर बनाने के लिए विभिन्न शिक्षण-विधियों का प्रयोग किया जाता है। शिक्षण-विधि का तात्पर्य उस तथ्य से लगाया जाता है कि किसी विषय के ज्ञान को विद्यार्थियों तक किस प्रकार पहुँचाया जाय, जिससे निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति की जा सके। वेस्ले के अनुसार, "शिक्षा में 'शिक्षण-विधि' नामक शब्द शिक्षण द्वारा पथ-प्रदर्शित की हुई उन क्रियाओं की एक माला है, जो विद्यार्थियों के द्वारा सीखने में परिणत होती है।"

इतिहास-शिक्षण में प्रयुक्त होने वाली निम्नलिखित पद्धतियाँ हैं:-

1. कहानी विधि,
2. जीवन-गाथा विधि,
3. स्रोत-विधि,
4. प्रयोगशाला विधि,
5. परियोजना या प्रोजेक्ट विधि।

1. **कहानी विधि** – इतिहास के शिक्षण को रोचक तथा सरल बनाने के लिए कहानी-विधि का प्रयोग किया जाता है। अल्प आयु के बालक-बालिकाओं की रुचि कहानियों में विशेषतः होती है। उन्हें किसी भी विषय का ज्ञान कहानियों के माध्यम से कराया जा सकता है। प्लेटो ने इस कारण ही इस विधि को छोटे बालकों के लिए विशेष उपयोगी बताया है। परन्तु इस विधि की सफलता अध्यापक के कहानी कहने के ढंग पर निर्भर करती है। यदि अध्यापक प्रभावशाली और रोचक ढंग से कहानी कहता है तो बालकों के हृदय में इतिहास के प्रति रुचि अपने आप उत्पन्न हो जायेगी। दूसरे, यह विधि बालकों की कल्पना शक्ति को विकसित करती है। तीसरे, इस विधि द्वारा छात्रा की जिज्ञासा को तृप्त किया जा सकता है।

विद्यार्थियों को ऐतिहासिक कहानियाँ सुनाते समय निम्नलिखित बातों पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है–

(i) अध्यापक को ऐतिहासिक कहानी को कभी भी पाठ्य–पुस्तक से पढ़कर नहीं सुनाना चाहिए।
(ii) कहानी सुनाने का उद्देश्य विद्यार्थियों को ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी होना चाहिए।
(iii) कहानी ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित हो, केवल कल्पना प्रधान न हो।
(iv) जिस ऐतिहासिक तथ्य से कहानी सम्बन्धित हो उसके विषय में अध्यापक को पूर्ण जानकारी होनी चाहिए।
(v) कहानी बोलचाल की सरल भाषा में ही सुनायी जाय।
(vi) कहानी के मध्य में सहायक सामग्री का भी प्रयोग किया जा सकता है।

2. **जीवन–गाथा विधि** – कुछ विद्वानों का विचार है कि महापुरूषों की जीवन गाथाओं के रूप में इतिहास को क्रमिक रूप से पढ़ाया जाय। प्रत्येक महान पुरूष अपने युग अथवा काल का प्रतिनिधित्व करता है और उसके द्वारा किये गये कार्यों से ही उस काल की घटनाएँ प्रभावित होती हैं। निम्न कक्षाओं में यह पद्धति विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होती है। इस विधि का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे ऐतिहासिक तथ्यों में सजीवता और रोचकता आ जाती है।
3. **स्रोत विधि** – इस विधि का प्रयोग मुख्यतया अतीत के इतिहास पर प्रकाश डालने के लिए किया जाता है। यह सम्भव नहीं है कि कोई भी इतिहासकार अतीतकालीन घटनाओं का अपने वर्तमान काल में अवलोकन कर सकें। ऐसी दशा में उसके लिए आवश्यकता हो जाता है कि वह अतीतकालीन इतिहास के स्रोतों को अपने अध्ययन का आधार बनाये। ये स्रोत दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं:–

    (क) मौलिक स्रोत (Primary Sources): स्मारक, सिक्के, यन्त्र, वस्तु, मानव–कंकाल, आज्ञा–पत्र, आदेश, फरमान, संविधान, सन्धियाँ, न्यायालयों के निर्णय आदि।

    (ख) सहायक स्रोत (Secondary Sources): इसके अन्तर्गत पुस्तकें, जीवन–चरित्र, आत्मकथाएँ इत्यादि।

4. **प्रयोगात्मक विधि** – यह सत्य है कि प्रयोगशाला विधि में विद्यार्थी कार्य करते हुए सीखते है तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करते हुए फीडबैक दिया जाता है।
5. **परियोजना या प्रोजेक्ट विधि** – यह विधि वर्तमान में कक्षा–प्रणाली के लिए पूर्णतया सैद्धान्तिक है और इसके व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध नहीं है। इस विधि के अन्तर्गत विद्यार्थी स्वयं करके सीखते हैं।

प्रोजेक्ट विधि के गुणः

1. प्रयोजनशीलता
2. क्रियाशीलता
3. यथार्थता
4. उपयोगिता
5. रोचकता
6. स्वतन्त्रता
7. सामाजिकता

सामाजिक विज्ञान के शिक्षण कार्य के अन्तर्गत विभिन्न विधियों एवं प्रविधियों का इस्तेमाल किया जाता है ताकि प्राप्त उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके। कोई भी विधि अपने आप में परिपूर्ण नहीं होता है। आवश्यकता अनुसार एक साथ कई विधियों एवं परिविधियों का इस्तेमाल करना एक कुशल शिक्षक की विशेषता होती है। पूर्व से निर्धारित विभिन्न विधियों एवं प्रविधियों के अलावे नवाचार होने के कारण इन परिविधियों में कई आयाम जुड़े हैं। अतः यहाँ आवश्यक है कि शिक्षक अपने कार्य कुशलता को बेहतर करने के लिए नवाचार युक्त नव विधि एवं प्रविधियों का भी ईजाद एवं इस्तेमाल करें।

इकाई– 3.4

भूगोलः शिक्षण विधियां, तकनीक एवं शिक्षण सामग्रियां

भूगोल विषय को सरस एवं रोचक बनाने के लिए आकर्षक मनोवैज्ञानिक तथा प्रभावशाली विधियों का प्रयोग किया जाता है। भूगोल के ज्ञान तथा विषय–वस्तु के विस्तार के साथ–साथ उसके शिक्षण की विधियाँ भी विकसित होती गई। अध्यापक का कर्तव्य है कि वह शिक्षण विधियों के निश्चित करने में पाठ्यवस्तु की प्रकृति तथा बालकों की आयु, रुचि, योग्यता का हमेशा ध्यान रखें और उन्हीं के आधार पर शिक्षण विधियों का चुनाव कर कक्षा अध्यापन में उनका प्रयोग करे।

भूगोल शिक्षण की विधियां

भूगोल शिक्षण की निम्नलिखित विधियां हैं:–

1. **निरीक्षण विधि** – यह भूगोल शिक्षण की सबसे प्रभावशाली विधि है जिसका प्रयोग प्रत्येक स्तर पर किया जा सकता है। प्रत्यक्ष दर्शन के आधार पर प्राप्त ज्ञान के सहारे अन्य स्थानों के समान परिस्थितियों की कल्पना सरल हो जाती है। वास्तव में बालक विभिन्न स्थानों तथा वस्तुओं का निरीक्षण कर उनके विषय में तर्क तथा विचार करता है। भौगोलिक पदार्थो के प्रत्यक्ष दर्शन से बालकों के भौगोलिक ज्ञान का विस्तार होता है। अतः शिक्षक को चाहिए कि निरीक्षण उस स्थान का किया जाए, जहां विद्यार्थियों को अधिक से अधिक भौगोलिक तथ्यों का अवलोकन करने का अवसर मिले। भौगोलिक सामग्री का निरीक्षण बालक के स्वाभाविक वातावरण में ही किए जाएं। प्राथमिक स्तर पर बालकों को आसपास के खेत, नदियां, पर्वत तथा झरने अवश्य दिखाए जाएँ।

2. **आगमन विधि** – इस विधि के अंतर्गत विद्यार्थियों के समक्ष कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं और उन उदाहरणों की सहायता से ही विद्यार्थियों द्वारा सामान्य सिद्धांत निकलवाया जाता है अर्थात किसी बात को प्रत्यक्ष न बता कर उदाहरणों द्वारा बालकों से निकलवाई जाती है, जैसे – बंगाल के लोग अधिकतर भात खाते हैं, मद्रास में नारियल के पेड़ अधिक हैं, सहारा रेगिस्तान में कम आबादी है, जापान में अधिकतर लकड़ी के घर हैं। इन उदाहरणों के आधार पर सामान्य नियम निकलवाए जाते हैं। इस प्रकार आगमन विधि उदाहरणों से प्रारंभ होती है तथा उदाहरणों के माध्यम से ही सामान्य नियमों का निर्धारण किया जाता है।
3. **निगमन विधि** – इस विधि में सामान्य से विशिष्ट या नियम से उदाहरण की ओर चलने वाले सूत्रों का प्रयोग किया जाता है। विद्यार्थियों के सामने इन सामान्य नियमों को रख दिया जाता है तथा उदाहरणों द्वारा उस नियम को सिद्ध कर दिया जाता है, जैसे – विद्यार्थियों के सामने एक नियम रखा जाता है कि भूमध्य रेखा के निकट के प्रदेश गर्म और तर होते हैं। अब विद्यार्थियों के सामने पूर्वी द्वीप समूह अमेजन कांगो बेसिन आदि के उदाहरण दिए जाएंगे। इस प्रकार सामान्य नियम बताकर उसकी सत्यता को सिद्ध किया जाता है। यह विधि आगमन विधि की पूरक है।
4. **वर्णन विधि** – इस विधि में किसी भौगोलिक स्थान या स्थल को जैसा का तैसा वर्णित कर दिया जाता है। विभिन्न स्थानों के प्राकृतिक दृश्य, निवासियों का जीवन आदि का वर्णन विद्यार्थियों को बोधगम्य कराने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है। भौगोलिक तथ्यों तथा उसके कार्य कारण संबंधों को स्पष्ट करने का प्रयास शिक्षक द्वारा कराना चाहिए। वर्णन को आकर्षक तथा प्रभावशाली बनाने के लिए विभिन्न सहायक सामग्री जैसे चित्र मानचित्र ग्लोब मॉडल रेखा चित्र आदि का प्रयोग करना आवश्यक है। इस प्रकार के वर्णन में विद्यार्थी रुचि लेते हैं तथा उनके लिए वह अध्ययन बोधगम्य हो जाता है।
5. **प्रादेशिक विधि** – इस विधि के अंतर्गत संसार को भौगोलिक कारकों – धरातल जलवायु, वनस्पति आदि के आधार पर विभाजित कर लिया जाता है। इस विधि के निम्नलिखित सोपान होते हैं:-
    - स्थिति
    - जलवायु तापक्रम वर्षा नमी आदि
    - मिट्टी
    - वनस्पति
    - जीव जंतु
    - मानव जीवन
    - आर्थिक विकास
    - उद्योग-धंधे, व्यापार आदि भविष्य की संभावनाएं

अर्थात, प्रादेशिक प्रदेश का तात्पर्य उस भूगोल से है जिसकी भौगोलिक विशेषताएँ एक सी होती हैं। एक-सी जलवायु वनस्पति, पशु जीवन तथा मानव जीवन में समानता पाने वाले

प्रदेशों का अध्ययन किया जाता है, जैसे – राजस्थान, कालाहारी, अरब, सहारा आदि स्थानों में एक सी जलवायु, एक से पशु तथा एक सा मानव पाया जाता है। अतः ऐसे स्थानों का गर्म मरुस्थल के प्रदेश नाम रखा गया है।

6. **पर्यटन विधि** – भौगोलिक तथ्यों की जानकारी देने के लिए पर्यटन विधि अत्यंत उपयोगी है। वस्तुओं के सही निरीक्षण पर भूगोल का वास्तविक ज्ञान आधारित है भूगोल का अधिकांश भाग मस्तिष्क की अपेक्षा कार्यों द्वारा सीखा जा सकता है। यह विधि छोटे बच्चों के लिए विशेष लाभदायक है। बालकों को आसपास के पर्वत, नदी, झरने पार्क, कारखानों आदि का भ्रमण कराया जा सकता है।
7. **तुलनात्मक विधि** – तुलनात्मक विधि एक उपयोगी और प्रभावशाली विधि है। बहुत सा ज्ञान विद्यार्थी तुलना के द्वारा ही ग्रहण करते हैं। प्रादेशिक विधि के अंतर्गत पढ़ाए जाने वाले पाठों में अन्य प्राकृतिक प्रदेशों के साथ तुलनात्मक ढंग से शिक्षण करना विशेष लाभदायक होता है। इस विधि में दो या उससे अधिक भू–भागों की समानता, विभिन्नता आदि का अध्ययन किया जाता है, जिसमें स्थानीय भूगोल को आधार मानकर अन्य प्रदेशों के भूगोल से तुलना की जाती है।
8. **प्रोजेक्ट विधि** – इस विधि में विद्यार्थियों को समस्या पूर्ण कार्य दिया जाता है पाठ या प्रकरण के उद्देश्यों का भी स्पष्टीकरण विद्यार्थियों के समक्ष कर दिया जाता है तथा कार्य का संपादन स्वभाविक पृष्ठभूमि में कराया जाता है। शिक्षक विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करते हैं तथा आने वाली कठिनाइयों का निवारण भी करता है। प्रोजेक्ट विधि विद्यार्थियों की क्रियाओं को अधिक महत्व देती है तथा इसमें कार्यप्रणाली का ज्ञान आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। विद्यार्थियों को कार्य करने की पर्याप्त स्वतंत्रता रखती है तथा अधिकांश कार्य ऐसे होते हैं जिनका संबंध उनकी तत्कालीन अवस्था से होता है। प्रोजेक्ट सामूहिक तथा वैयक्तिक दोनों प्रकार के होते हैं। इससे बालक के आत्मविश्वास, धैर्य, ज्ञान आदि गुणों का विकास होता है।
9. **प्रश्नोत्तर विधि** – यह विधि विद्यार्थियों को उनके पूर्व ज्ञान के आधार पर नवीन ज्ञान भी प्रदान करता जाता है। यह ज्ञान के आदान–प्रदान की क्रिया प्रश्न उत्तर के माध्यम से ही चलती है। इस विधि से विद्यार्थी वर्ग में सक्रिय रहते हैं और उनमें ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा बनी रहती है। इस विधि का प्रयोग प्राथमिक स्तर पर आसानी से किया जा सकता है।
10. **क्रियात्मक विधि** – विद्यार्थी क्रिया द्वारा सरलता से सीखते हैं तथा जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त करते हैं वह उनके मस्तिष्क में दृढ़ हो जाता है। इस विधि से विद्यार्थी जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त करता है वह स्वयं वस्तुओं को निरीक्षण करके करता है। यह विधि बालक को आत्म प्रकाशन, निरीक्षण तथा कार्य करने का पूरा अवसर देता है।

भूगोल शिक्षण के तकनीक

शिक्षण विधियों को अधिक स्पष्ट तथा प्रभाव उत्पादक बनाने के लिए कुछ विशिष्ट तकनीक या प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। यह शिक्षण तकनीक विभिन्न उद्देश्यों के

लिए भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रयोग में लाई जाती हैं। ये तकनीकी या प्रविधियां ज्ञानोपार्जन को अधिक प्रभावशाली ग्राह्य, बोधगम्य, सरल तथा रोचक बनाती हैं।

भूगोल शिक्षण को अधिक ठोस तथा प्रभावशाली बनाने के लिए निम्नलिखित शिक्षण तकनीक का प्रयोग किया जाता है:-

1. **प्रश्न प्रविधि** - भूगोल शिक्षण में प्रश्नों का बहुत महत्व है। इसके द्वारा तथ्यों को स्पष्ट किया जाता है। इस तकनीक का ध्येय विद्यार्थियों के ज्ञान को जांचना, कार्यो के प्रति रुचि एवं कौतूहल उत्पन्न करना, विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों, तात्कालिक समस्याओं से अवगत होना, उनके दोषों तथा कठिनाइयों का पता लगाना, उनके अर्जित ज्ञान एवं उपलब्धि को मापना, उन्हें अन्वेषण के लिए प्रोत्साहित करना, उनके सीखने की प्रक्रिया में पथ प्रदर्शन करना तथा उन्हें ज्ञान का पुनरावलोकन एवं प्रयोग के लिए अवसर प्रदान करना है।
2. **अभ्यास प्रविधि** - भूगोल शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए अभ्यास प्रविधि का प्रयोग किया जाता है क्योंकि विद्यार्थी किसी तथ्य को जितनी बार आवृत्ति करता है वह तथ्य उतना ही उसके मस्तिष्क में स्थाई बन जाता है। भूगोल शिक्षण में अभ्यास प्रविधि का प्रयोग किसी प्रश्न के उत्तर का स्मरण करने, मानचित्र चित्र मॉडल ग्राफ आंकड़ा आदि के निर्माण करने, तथ्यों को स्मरण करने आदि के लिए सरलता से किया जाता है।
3. **परीक्षा प्रविधि** - इस प्रविधि के प्रयोग से बालकों के अर्जित ज्ञान की जांच की जाती है और यह पता लगाया जाता है कि उन्होंने पठित वस्तु को किस सीमा तक ग्रहण किया जाता है। इसके लिए लिखित एवं मौखिक दोनों प्रकार के प्रश्नों की सहायता ली जाती है। इसके अलावा प्रायोगिक परीक्षा का भी प्रयोग किया जाता है। इस तकनीक द्वारा विद्यार्थियों की कठिनाईयों एवं अशुद्धियों से अवगत करा कर उनको दूर करने के लिए सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं।
4. **उदाहरण प्रविधि** - इस प्रविधि के द्वारा शिक्षक मौखिक कथन द्वारा भौगोलिक तथ्यों को बालकों के समक्ष प्रस्तुत करता है और विभिन्न उदाहरण देकर अपने कथन को रुचिकर एवं ग्राह्य बनाता है, जिससे विद्यार्थी पाठ में रुचि लेने लगते हैं। उदाहरण तीन प्रकार के होते हैं - मौखिक उदाहरण, प्रदर्शनात्मक उदाहरण तथा लाक्षणिक उदाहरण। उदाहरण सरल एवं ग्राह्य होने चाहिए। साथ-ही दैनिक जीवन से संबंधित होने चाहिए।
5. **कार्य निर्धारण प्रविधि** - कार्य निर्धारण वस्तुतः एक प्रयोगात्मक प्रविधि है इसका प्रयोग पाठ की समाप्ति के पश्चात किया जाता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों में प्रेरणा प्रदान की जाती है जिससे उनके सीखने के लिए विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता मिलती है। कार्य निर्धारण द्वारा अर्जित ज्ञान तथा नवीन संबंधों के ज्ञान की दूरी को मिटाया जा सकता है।

भूगोल शिक्षण हेतु सहायक सामग्री

भूगोल एक वैज्ञानिक विषय है और हमें बहुत से प्रयोगों द्वारा भौगोलिक तथ्य को समझना पड़ता है। सहायक सामग्री भूगोल शिक्षण के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करता है और विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति को विकसित करता है, जिससे विद्यार्थी अनायास ही मानचित्र द्वारा बहुत से तथ्यों तथा वस्तुओं से परिचित हो जाते हैं। भौगोलिक सहायक सामग्री विद्यार्थियों को एक ऐसा वातावरण प्रदान करता है, जिससे भौगोलिक अध्ययन के लिए प्रेरणा मिलती है तथा उनकी रुचि उत्पन्न होती है और इसके स्वरूप फलस्वरूप उनका ध्यान विषय की ओर आकर्षित हो जाता है।

भूगोल शिक्षण हेतु निम्नलिखित सामग्री होनी चाहिए:-

1. पाठ्य-पुस्तकें
2. विद्यार्थियों की मेज
3. ग्लोब
4. बैरोमीटर
5. ताप मापक
6. एटलस
7. खड़े भित्ति मानचित्र
8. खिसकने वाले विशाल श्यामपट्ट
9. सामयिक भूगोल संबंधी पत्र-पत्रिकाएं
10. श्वेत दीवार
11. शोकेस
12. पुस्तके रखने के लिए शीशे की अलमारी
13. पानी का नल
14. एपिडायस्कोप घूमने और ऊंचा नीचा होने वाले स्टैंड
15. स्पिरिट लैंप या गैस
16. छायापट जिसे लपेटा जा सके, आदि।

इकाई-3.5
राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र के एकीकृत विषय के रूप में सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन

सामाजिक विज्ञान विकास की संकल्पना

मानव की क्रियाओं, शक्ति, राजनैतिक व्यवस्था, निर्णय, निर्माण और निर्णय प्रक्रिया का अध्ययन राजनीति विज्ञान है। राजनीति सामाजिक जीवन का सबसे महत्वपूर्ण और जटिल पहलू है। मानव जीवन राजनीति से इतना अटूट रूप से जुड़ा है कि किसी भी पहलू को राजनीति से पृथक नहीं किया जा सकता लेकिन राजनीति क्या है? ये एक विवाद ग्रस्त एवं जटिल प्रश्न है। सभ्य मानव सदैव से इस प्रश्न का उत्तर खोजता आ रहा है। साधारण मनुष्य से लेकर राजनीति के विद्वानों ने अपने-अपने तरीकों से राजनीति की

व्याख्या की है। अरस्तु ने राजनीति को सर्वोच्च विज्ञान कहकर पुकारा और ये सिद्ध करने का प्रयास किया कि मानव जीवन के चारों ओर के वातावरण को समझने के लिए राजनीति का ज्ञान नितांत आवश्यक है। अरस्तु के अनुसार राजनीति वैधानिक रूप से निर्धारित करती है कि हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए? वास्तव में राजनीति एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज अपनी समस्याओं का समाधान करता है और "जियो और जीने दो" का वातावरण स्थापित करता है।

राजनीति निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक समाज में सीमित साधन होते हैं, इसे प्राप्त करने वाले अधिक होते हैं। अंत में यह कहा जा सकता है कि संघर्ष को सुलझाने की प्रक्रिया का अध्ययन ही राजनीति की विषय-वस्तु है। राजनीति दो शब्द राज-शासन और नीति-नियम से बना है अर्थात् शासन करने के नियम को हम राजनीति कहते हैं। जितनी अच्छी राजनीति होगी उतना ही विकास होगा। राजनीति घर से शुरू होती है। हम कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। परिवार हित के लिए घर का मुखिया राजनीति का कार्य करता है। आपने घर में पिता का कहना सुना होगा कि तुम ये काम करो, यह मत करो। दोस्तों का कहना इधर जाओ, उधर जाओ आदि भी राजनीति का हिस्सा है।

राजनीति के संबंध में आम अवधारणा

आम लोगों की धारणा में राजनीति का मतलब धोखाधड़ी, बेईमानी, नाइन्साफी, मक्कारी आदि है। समाज या राजनैतिक व्यवस्था में नेताओं द्वारा नारेबाजी कर खोखली राजनैतिक आश्वासन दिया जाना, जनता के बीच द्वेष फैलाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना आदि को ही अक्सर राजनीति समझ लिया जाता है या कह दिया जाता है लेकिन यह वास्तव में राजनीति के प्रति एक दृष्टिकोण मात्र है।

राजनीति के क्रमबद्ध अध्ययन की शुरूआत लगभग 300 BC में प्लेटो और अरस्तू ने यूनान में की। आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत की शुरूआत बोंदा और मैकियावाली ने की। राजनीति के क्रमबद्ध अध्ययन को ही राजनीति विज्ञान नाम दिया गया है। राजनीति का महत्व देश का विकास, राष्ट्र सेवा (लोगों की उन्नति करे) और कर्तव्यशील राष्ट्र होता है। जब राज्य प्रबंधन को चलाए जाने वाली नीति, चुने हुए लोगों द्वारा अन्य लोगों के विकास के लिए बनायी जाती है तो यह सकारात्मक राजनीति है। वहीं जब पूँजीपति के लिए कार्य करे अर्थात् उनसे चुनाव लड़ने के लिए चंदा लिया जाता है अतः उनके हित में कार्य करते हैं, सत्ता हथियाने के लिए लोगों को लिंग, धर्म व जाति के आधार पर बाँधना नकारात्मक राजनीति है।

सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवनः शिक्षण विधियां, तकनीक एवं शिक्षण सामग्रियाँ

अर्थशास्त्र की समझ

अर्थशास्त्र सामाजिक विज्ञान की एक शाखा है जिसके अन्तर्गत, उत्पादन, उपभोग विनिमय तथा वितरण का अध्ययन किया जाता है परन्तु आधुनिक अर्थशास्त्र में कई नई शाखाओं को जोड़कर राजस्व कल्याण, जनकल्याण, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, विदेशी विनिमय, बैकिंग आदि के अध्ययन को महत्व दिया है।

अर्थव्यवस्था अर्थशास्त्र का व्यवहारिक पक्ष है। जिसे बहुत से लोग अर्थशास्त्र ही मान लेते हैं। अर्थव्यवस्था में एक निश्चित क्षेत्र या देश में रहने वाले लोग अपनी अजीविका प्राप्त करते हैं जैसे भारतीय अर्थव्यवस्था, चीनी अर्थव्यवस्था, विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था आदि। पिछली आधी शताब्दी के दौरान अर्थशास्त्र के अध्ययन में विभिन्न विषयों को शामिल किया गया है क्योंकि यह अलग-अलग क्षेत्रों के भिन्न उद्देश्यों को पूरा करता है। अर्थशास्त्र दो शब्दों से मिलकर बना है। अर्थ = धन, शास्त्र = वैज्ञानिक अध्ययन। हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन कमाते हैं, वह अर्थशास्त्र में आता है। अर्थशास्त्र वह शास्त्र है जिसमें मनुष्य के उन कार्यो का अध्ययन किया जाता है जिन्हें वे अपनी असीमित आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सीमित साधनों अर्थात् धन को प्राप्त करने के संबंध में करते हैं। केवल धन ही अर्थशास्त्र नहीं बल्कि प्रत्येक कार्य जो दुर्लभता, आर्थिक विकास और अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने के लिए किया जाता है वह भी अर्थशास्त्र है।

अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान में संबंध

राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र में धनिष्ठ संबंध होने के मुख्य कारण दोनों सामाजिक विज्ञान के विषय हैं। दोनों विषयों का उद्देश्य मानव कल्याण से सम्बन्धित है। दोनों में मानव जीवन को सुखी बनाने के उद्देश्य निहित हैं। दोनों एक-दूसरे से स्वतंत्र नहीं रख सकते हैं। इनमें परस्पर निर्भरता है। आधुनिक राजनीतिक विश्लेषण में जहाँ राजनीतिक विकास, आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण एवं सामाजिक परिवर्तनों का महत्वपूर्ण स्थान है वहाँ आर्थिक साधनों का भी महत्वपूर्ण स्थान है।

राजनीति आर्थिक तत्वों को प्रभावित करती है। राज्य नियम बनाकर आर्थिक तत्वों को प्रभावित एवं नियंत्रित करता है। जैसे कर, राजस्व नीति, वितरण, उपयोग, आयात निर्यात, मुद्रा, व्यापार तथा बैंकिग आदि। राजनीतिशास्त्र को निर्माणात्मक शास्त्र कहा जाता है। इन सबके बाद भी राजनीति विज्ञान का क्षेत्र व्यापक और सजीवों से संबंधित है। जबकि अर्थशास्त्र का क्षेत्र संकुचित होने के साथ हम इसमें निर्जीव वस्तुओं का अध्ययन करते हैं। अर्थशास्त्र राजनीतिशास्त्र के आदर्शो को प्राप्त करने का साधन है। लोगों की आर्थिक स्थिति को सुधारकर राज्य नागरिकों के नैतिक विकास के लिए अच्छी बाह्य परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है।

शिक्षण सामग्रियाँः सामाजिक विज्ञान शिक्षण की प्रक्रिया में कई विधि एवं तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इसके अंतर्गत अवधारणा को सुस्पष्ट करने के लिए उपयुक्त अधिगम सामग्रियों का इस्तमाल करना अति आवश्यक होता है। राजनीतिक जीवन, सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक जीवन अर्थशास्त्रीय परिपेक्ष्य उपयोग की सुलभता एवं उपलब्धता आसान हो सके।

समेकन

इस इकाई में हमने सामाजिक विज्ञान के आधारभूत सिद्धांतों, उपागमों एवं शिक्षण विधियों के बारे में जाना कि सीखने-सीखाने की उपर्युक्त कौन-कौन से आधार सिद्धांत हो सकते हैं। बालकों के ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक पक्षों के विकास पर किस तरह के शिक्षण-अधिगम उपागमों का निर्माण किया जाए। इन उपागमों के अन्तर्गत किन-किन आई0सी0टी0 तकनीकों का उपयोग की जाए।

इस प्रकार हमने सीखा कि सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत विभिन्न विषयों के शिक्षण कला को कलात्मक तरीके से कैसे किया जाए। इसके लिए क्या-क्या जिसकी सहायता से सीखने-सीखाने की प्रक्रिया को जीवंत बनाया जा सकें।

अत: सामाजिक विज्ञान शिक्षण के अर्न्गत उपर्युक्त किया जाय विधियों, प्रविधियों, तकनीकों, संसाधनों का चयन एवं उपयोग करते हुए सीखने-सीखाने को जीवंत बनाया जा सकें।

मूल्यांकन

1. समाजिक विज्ञान के विभिन्न उपागकों की विवेचना करें।
2. शिक्षण में आई0सी0टी0 के उपयोगिता का वर्णन करें।
3. इतिहास शिक्षण की प्रमुख विधियों की व्याख्या कीजिए।
4. आपकी दृष्टि में भूगोल शिक्षण की सबसे उपयुक्त कौन सी विधि है, और क्यों? स्पष्ट करें।

इकाई–4

सामाजिक विज्ञान में आकलन–मूल्यांकन (Assessment and Evaluation in Social Science)

इकाई–4.1

- परिचय
- उद्देश्य
- आकलन का अर्थ एवं परिभाषा
- मूल्यांकन का अर्थ एवं परिभाषा
- आकलन एवं मूल्यांकन में संबंध
- आकलन एवं मूल्यांकन का महत्व
- आकलन एवं मूल्यांकन के उद्देश्य
- मूल्यांकन प्रक्रिया
- मूल्यांकन के क्षेत्र एवं प्रकार
- सामाजिक विज्ञान में आकलन मूल्यांकन तथा विद्यार्थियों की उपलब्धियों के आकलन एवं मूल्यांकन के तरीके

इकाई–4.2

- सीखने के संकेतों की समझ

इकाई–4.3

- पाठ्य पुस्तकों में दिए गए गतिविधियों, प्रदत्त कार्यों एवं सवालों का विश्लेषण

इकाई–4.4

शिक्षण के दौरान पूछने योग्य सवालों की समझ

इकाई–4.5

- सामाजिक विज्ञान में बच्चों के आकलन–मूल्यांकन के विविध तरीकों की समझ
- समेकन
- मूल्यांकन

परिचय

आकलन एवं मूल्यांकन शैक्षिक प्रक्रिया ही नहीं बल्कि जीवन की प्रत्येक प्रतिक्रिया का अविच्छिन्न अंग है। मूल्यांकन के अभाव में हमारी समस्त क्रियाएं मूल्य विहिन बन सकती है क्योंकि आकलन एवं मूल्यांकन में न केवल विद्यार्थी की वरन् शिक्षण-प्रक्रिया के विभिन्न अंगों की सफलताओं, असफलताओं कठिनाईयों कमियों आदि का स्पष्ट रूप से निर्धारण हो जाता है, जिसके फलस्वरूप हम भविष्य के लिए सचेत हो जाते हैं।

सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में आकलन एवं मूल्यांकन सतत् चलने वाली एक प्रक्रिया है। इसके द्वारा कक्षा-कक्ष तथा कक्षा से बाहर विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों ही यह सुनिश्चित होना चाहते हैं कि संबंधित विषय वस्तु के उद्देश्यों की पूर्ति कहाँ तक हुई। विद्यार्थियों के व्यवहार में कितना परिवर्तन आया। शिक्षक इस दिशा में कहाँ तक सहयोग दिया तथा अपने कार्य में कहाँ तक सफल रहा है। इसके लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण आयोजित किए जाते हैं, जो प्राप्त उद्देश्यों के अनुसार सीमा निर्धारित करते हैं। आकलन एवं मूल्यांकन का आधार शिक्षण अधिगम प्रक्रिया एवं परीक्षण का साथ-साथ चलना है।

इस इकाई में आकलन-मूल्यांकन के विविध पक्षों के चर्चा करते हुए सामाजिक विज्ञान व सामाजिक विज्ञान शिक्षण में आकलन-मूल्यांकन के उद्देश्य, महत्व, उसकी प्रक्रिया, विभिन्न तकनीकी व विधियाँ सीखने के संकेतक पाठ्य-पुस्तकों पर आधारित गतिविधियाँ प्रश्न-पत्र और परीक्षण के साथ-साथ प्रयोगात्मक क्रियाकलाप का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

उद्देश्य

इस इकाई के उद्देश्य निम्नवत होंगे-

- विद्यार्थी उच्च प्राथमिक स्तर के सामाजिक विज्ञान विषय व सामाजिक विज्ञान शिक्षण में आकलन एवं मूल्यांकन के बारे में समझ बना सकेंगे।
- विद्यार्थी आकलन एवं मूल्यांकन की प्रक्रिया तथा इसके महत्व को समझ सकेंगे।
- विद्यार्थी सीखने के संकेत को समझकर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इनका उपयोग कर सकेंगे।
- पाठ्यपुस्तकों में दिए गए गतिविधियों, प्रदत्त कार्यो एवं प्रश्नों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- शिक्षण के दौरान कक्षागत परिस्थिति में पूछने योग्य सवालों की समझ विकसित कर सकेंगे।
- सामाजिक विज्ञान शिक्षण में आकलन मूल्यांकन के विभिन्न तकनीकों व विधियों की समझ विकसित कर सकेंगे।

आकलन एवं मूल्यांकन (Assessment and Evaluation)

सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में आकलन एवं मूल्यांकन साथ-साथ चलने वाली एक सतत प्रक्रिया है जो शिक्षण प्रक्रिया का अभिन्न अंग है जिसके द्वारा शिक्षा से जुड़े तमाम पहलुओं यथा - शिक्षार्थी, शिक्षक, पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधियों आदि की सफलता एवं प्रासंगिकता का निर्धारण किया जाता है।

आकलन का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Evaluation)

आकलन का आशय विद्यार्थी की क्षमता एवं योग्यता को लगातार जांचने परखने से है। हम जानते हैं कि किसी भी विषय वस्तु का मूल्यांकन करते हुए उसका आकलन किया जाता है। आकलन द्वारा विद्यार्थियों की क्षमता और योग्यता गुणों व विशेषताओं, रुचियाँ, अभिवृत्तियों तथा कौशल आदि का गुणात्मक वर्णन किया जाता है। आकलन के द्वारा विद्यार्थी की विशेषता अथवा कमी की जानकारी मिलती है, जिससे उसमें सतत् सुधार करते हुए प्रगति की ओर अग्रसर किया जा सके। आकलन के आधार पर ही विद्यार्थी का मूल्यांकन किया जाता है।

सतत रूप से आकलन प्रतिदिन साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक एवं वार्षिक किया जाता है। इस प्रकार चरणबद्ध रूप से विद्यार्थी का किया गया आकलन काफी प्रभावशाली एवं उपयोगी हो जाता है हालांकि आकलन कर्त्ता या शिक्षक को इसकी रूपरेखा पहले ही निर्धारित कर लेनी चाहिए जिससे गुणात्मक परिणाम की सुनिश्चितता बढ़ जाए। विद्यार्थी अधिगम में कितनी सफलता प्राप्त किया पाठ शिक्षण के पश्चात मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा आकलन किया जाता है।

इरविन के अनुसार, ‘‘आकलन विद्यार्थियों के अधिगम एवं विकास का व्यवस्थित आधार का अनुमान है। यह किसी भी वस्तु को परिभाषित कर चयन, रचना, संग्रहण, विश्लेषण, व्याख्या तथा सूचनाओं का उपर्युक्त प्रयोग कर छात्र विकास तथा अधिगम को बढ़ाने की प्रक्रिया है।‘‘

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि विद्यार्थियों की क्षमता और योग्यता एवं अन्य गुणों का सतत जांचने परखने की प्रक्रिया आकलन है। जब एक ही साथ विद्यार्थी के कई पक्षों कार्यो की जांच की जाए जिससे कि विस्तृत व वांछित परिणाम प्राप्त हो सके, तो इस आकलन को व्यापक आकलन (Comprehensive Assessment)भी कहा जाता है। आकलन के क्रम में शिक्षक को विद्यार्थी की सृजनात्मकता, नवाचार, रुचियों आदि का भी ध्यान रखना चाहिए जिससे उसका सर्वांगीण विकास में मदद किया जा सके।

मूल्यांकन का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Evaluation)

मूल्यांकन का शाब्दिक अर्थ मूल्य के अंकन से है। दूसरे शब्दों में, मूल्यांकन मूल्य निर्धारण की एक प्रक्रिया है। यह औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में एक क्रमबद्ध और साथ-साथ चलने वाली सोद्देश्य प्रक्रिया है। इसकी सहायता से किसी पाठ्यक्रम में निहित उद्देश्यों और मूल्यों की जांच की जाती है। हालांकि यह पद इतना व्यापक है कि इसमें मापन तथा आकलन दोनों का समावेश होता है। जहां एक और मापन के अंतर्गत किसी व्यक्ति अथवा वस्तु के गुणों या विशेषताओं का वर्णन मात्र ही किया जाता है, वहीं दूसरी ओर मूल्यांकन के अंतर्गत उनके गुणों की वांछनीयता पर दृष्टिपात किया जाता है। अत: यह भी कहा जा सकता है कि मापन वास्तव में मूल्यांकन का एक अंग मात्र है। मूल्यांकन की व्यापकता को आगे अंकित बिंदु से स्पष्ट देखा जा सकता है।

मापन-आकलन-मूल्यांकन

आर.के.कपूर के अनुसार - मूल्यांकन ज्ञान को जांचने तक ही सीमित नहीं होना चाहिए, वरन् इसके द्वारा विद्यार्थियों की समझदारी, कौशल, कृतियां तथा रुचियों की भी जांच की जानी चाहिए।

कोठारी आयोग के अनुसार - मूल्यांकन एक सतत चलने वाली प्रक्रिया है। यह संपूर्ण शिक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण अंग है और इस प्रकार इसका शैक्षिक उद्देश्यों से घनिष्ठ संबंध है।

एच.एच.रैमर्स तथा एन.एल.गेज के अनुसार, ''मूल्यांकन में व्यक्ति अथवा समाज अथवा दोनों की दृष्टि से क्या अच्छा है अथवा क्या वांछनीय है का विचार या लक्ष्य निहित रहता है।''

क्रानबेक के अनुसार, ''मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा शिक्षक तथा शिक्षार्थी इस बात का निर्णय करते हैं कि शिक्षण के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा रहा है या नहीं।''

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद NCERT ने मूल्यांकन के प्रत्यय को स्पष्ट करते हुए कहा है कि यह एक ऐसी सतत व व्यवस्थित प्रक्रिया है जो देखती है कि:-

1. निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है,
2. कक्षा-कक्ष में दिए गए अधिगम अनुभव कितने प्रभावशाली रहे हैं, तथा
3. शिक्षा के उद्देश्य कितने अच्छे ढंग से पूर्ण हो रहे हैं।

उपयुक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि मूल्यांकन एक निर्णयात्मक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से पता चलता है कि शिक्षक शिक्षण के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में किस सीमा तक सफल रहे हैं तथा विद्यार्थी के व्यवहार में कितना वांछित परिवर्तन हुआ है।

आकलन एवं मूल्यांकन में संबंध

सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में आकलन, मूल्यांकन की एक निर्णयात्मक और व्यापक प्रक्रिया है। शिक्षण कार्य की सफलता का अनुमान मूल्यांकन परिणामों के आकलन के आधार पर ही किया जाता है एवं प्राप्त परिणामों के आकलन के पश्चात ही हम आगामी योजनाओं की रणनीति तैयार करते हैं। वास्तव में मूल्यांकन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि समस्त पक्षों का सही ढंग से आकलन किया गया है या नहीं। शिक्षा का संबंध एक सार्थक एवं प्रभावोत्पादक जीवन की तैयारी से है और मूल्यांकन उसकी आलोचनात्मक प्रतिपुष्टि देने की विधि है हालांकि परंपरागत मूल्यांकन प्रणाली विद्यार्थियों की कुछ ही योग्यता का मापन करने में सक्षम है जो अपर्याप्त है। आकलन का उद्देश्य निश्चित रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया और सामग्री में सुधार करना है और उन पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न करना है जो विद्यालय के विभिन्न चरणों के लिए निश्चित किए गए हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आकलन एवं मूल्यांकन एक–दूसरे से अलग नहीं बल्कि एक–दूसरे से गहराई से संबंधित हैं एवं सहयोगी हैं। वर्तमान में समय, संदर्भ एवं परिस्थिति के अनुसार आकलन एवं मूल्यांकन को पर्याय के रूप में भी प्रयुक्त किया जा रहा है।

आकलन एवं मूल्यांकन का महत्व

न केवल सामाजिक विज्ञान में बल्कि संपूर्ण शिक्षा प्रक्रिया से जुड़े विद्यार्थियों शिक्षकों अभिभावकों प्रशासकों तथा समाज के लिए आकलन एवं मूल्यांकन का अत्यंत महत्व है। आकलन मूल्यांकन के महत्व को निम्नांकित–अंकित बिंदुओं से व्यक्त किया जा सकता है–

1. आकलन एवं मूल्यांकन शिक्षण के उद्देश्यों को स्पष्ट करता है।
2. आकलन एवं मूल्यांकन विद्यार्थियों को अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करता है।
3. आकलन एवं मूल्यांकन शिक्षक की प्रभावशीलता को निर्धारित करता है।
4. आकलन एवं मूल्यांकन शिक्षाविद् प्रसाद शिक्षक विद्यार्थी अभिभावक आदि शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति की सीमा से अवगत हो सकते हैं।
5. आकलन एवं मूल्यांकन उचित शैक्षिक निर्णय लेने के लिए अत्यंत आवश्यक है।
6. आकलन एवं मूल्यांकन के आधार पर पाठ्यक्रम, पाठ्यवस्तु, शिक्षण–विधियों, सहायक सामग्री आदि ने आवश्यक व वांछित सुधार किया जा सकता है।
7. विद्यार्थियों को शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन दिया जा सकता है।
8. आकलन एवं मूल्यांकन की मदद से विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों की उपयोगिता की जानकारी मिल सकती है।

9. विद्यार्थियों की क्षमता, योग्यता, रुचि, अभिवृत्ति, व्यवहार, गुण व कौशल आदि का ज्ञान संभव है।
10. कक्षा शिक्षण में सुधार लाना और विद्यार्थियों की कक्षा में प्रोन्नति का निर्णय लिया जाता है।

आकलन एवं मूल्यांकन के उद्देश्य

आकलन एवं मूल्यांकन के उद्देश्य को निम्नवत सूचीबद्ध किया जा सकता है:-
'आकलन एवं मूल्यांकन के उद्देश्य - (Objective of Assessment and Evaluation)।
आकलन एवं मूल्यांकन के प्रमुख उद्देश्यों को संक्षेप में निम्नवत ढंग से सूचीबद्ध किया जा सकता है:-

1. विद्यार्थियों की वृद्धि तथा विकास में सहायता प्रदान करना।
2. विद्यार्थियों की वृद्धि तथा विकास में उत्पन्न अवरोधों को जानना।
3. विद्यार्थियों की शैक्षिक प्रगति के बाधक तत्वों को जानना।
4. विद्यार्थियों द्वारा अर्जित ज्ञान बोध एवं कौशल की जांच करना।
5. विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं से अवगत होना।
6. विद्यार्थियों का अधिगम के लिए प्रेरित करना और स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना का विकास करना।
7. विद्यार्थियों की शिक्षण प्रक्रिया में आ रही कमियों को जानना और उनका निवारण करना।
8. विद्यार्थियों की शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन एवं मार्गदर्शन हेतु आधार तैयार करना।
9. विद्यार्थियों के योग्यताएं आधारित वर्गीकरण एवं विभिन्न दृष्टिकोण से चयन करना।
10. कक्षा-शिक्षण में सुधार करना।
11. पाठ्यक्रम में सुधार के लिए आधार तैयार करना।
12. शिक्षण विधियों तथा सहायक सामग्रियों की उपादेयता को जानना।
13. शैक्षिक मानकों का निर्धारण करना।
14. कक्षा उन्नति तथा रोजगार के लिए शैक्षिक योग्यता का प्रमाण-पत्र देना।

मूल्यांकन प्रक्रिया

ब्लूम महोदय ने मूल्यांकन को आधुनिक शिक्षा प्रणाली में क्रमिक प्रक्रिया माना है, जो शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण पाठ्यक्रम निर्माण तथा उपयुक्त शिक्षण प्रणाली में प्रमुख भूमिका निभाता है। इसे तीन मुख्य सोपानों में बाँटकर समझा जा सकता है:-

1. शिक्षण उद्देश्य
2. अधिगम क्रियाएं।
3. व्यवहार परिवर्तन।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा प्रकाशित 'द कांसेप्ट ऑफ इवैल्यूएशन' के अध्याय सप्तम में भी मूल्यांकन-प्रक्रिया के सात पदों में जिक्र किया गया है जो निम्न है:-

1. शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण।
2. शिक्षण अधिगम प्रक्रिया ओं का निर्धारण।
3. परिस्थिति ज्ञान।
4. परीक्षण करना।
5. मूल्यांकन के उपकरण एवं विधियां।
6. उपकरणों का प्रशासन।
7. परिणामों की व्याख्या एवं उनका उपयोग।

नि:संदेह उपर्युक्त प्रक्रिया का पालन आई.सी.टी. का प्रयोग शिक्षण अधिगम में मूल्यांकन हेतु किया जाए तो परिणाम उद्देश्य पूर्ण अधिक विश्वसनीय वैध एवं उपयोगी साबित होंगे साथ-ही शिक्षण प्रक्रिया सरस रोचक एवं बोधगम्य होगा।

मूल्यांकन के क्षेत्र एवं प्रकार

1. **संज्ञानात्मक क्षेत्र** - इसके अंतर्गत प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर पढ़ाए जाने वाले विषयों का मूल्यांकन किया जाता है, जो बच्चों के मानसिक विकास में मदद करते हैं। यह मूल्यांकन फॉर्मेटिव (Formatiive) एवं सममेटिव (summative) दोनों प्रकार से किया जाता है।
2. **सह-संज्ञानात्मक क्षेत्र** - इसके अंतर्गत सह शैक्षिक अर्थात खेलकूद, योगा, साहित्यिक-सांस्कृतिक गतिविधियों आदि को शामिल किया जाता है, जिसके माध्यम से बच्चों का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक नैतिक एवं संवेगात्मक विकास होता है।

सामाजिक विज्ञान में आकलन मूल्यांकन व्यवस्था

सामाजिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों के अनुरूप उसकी मूल्यांकन प्रणाली होनी चाहिए जिसमें विद्यार्थियों को नंबर देकर उतीर्ण अनुत्तीर्ण घोषित नहीं किया जाए बल्कि उन्हें बेहतर सीखने में मदद करना चाहिए। मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:-

1. **शिक्षण के लिए फीडबैक** - विद्यार्थी कितना सीख पाए हैं, यह आकलन करने के लिए उसके आधार पर आगे की शिक्षण के तरीके तय किए जाएं।
2. **विद्यार्थी के लिए फीडबैक** - विद्यार्थी को खुद जानने के लिए कि वह क्या सीख गया है और उसे आगे क्या प्रयास करना है।
3. **अप्रिशिएसन** - विद्यार्थियों के प्रयासों एवं उपलब्धियों को सराहनीय और संतुष्टि जताने के लिए।

4. **शिक्षक और स्कूल की जवाबदेही** – समुदाय को बताने के लिए कि शिक्षक विद्यार्थियों को कितना सिखा पाए।
5. **ग्रेडिंग** – विद्यार्थियों के स्तरीकरण के लिए कि कौन बेहतर है और कौन कमतर।
6. **सर्टिफिकेशन** – क्या विद्यार्थी ने उस पाठ्यक्रम के ज्ञान, कौशल और मनोदशा को प्राप्त किया या नहीं? यह घोषणा करने के लिए।

आकलन-मूल्यांकन के प्रकार

1. कक्षा में लगातार चलने वाली मूल्यांकन गतिविधियां इन गतिविधियों को इकाई शिक्षण के साथ जोड़ा जा सकता है। यह अनौपचारिक होंगे और इनमें नंबर या ग्रेड देने की आवश्यकता नहीं है और ना ही किसी प्रकार के दस्तावेजीकरण करने का। इनका उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी विषय की मुख्य बातों को समझ गए या नहीं। विद्यार्थियों के प्रयासों को सराहना, उनका हौसला बढ़ाना, उन्हें फीडबैक देना और उनके अध्ययन को सुदृढ़ करने में मदद करना। मूल्यांकन के कई तरीके हैं जैसे – सामूहिक गतिविधि, स्व-आकलन, आपसी आकलन, मौखिक कार्य, पुस्तकालय या इंटरनेट का उपयोग आदि। वास्तव में यह मूल्यांकन के साथ-साथ सार्थक शैक्षणिक गतिविधियां भी हैं।
2. **इकाईवार मूल्यांकन** – गतिविधियां प्रत्येक इकाई के लिए निर्धारित कालखंड अवधि में यह गतिविधि उपर्युक्त होगी शिक्षक निम्नलिखित गतिविधियों में से उपर्युक्त को छाँट कर प्रत्येक इकाई के समाप्ति के बाद करवाएं:-
   - लघु टेस्ट देना और आदर्श उत्तर के आधार पर विद्यार्थी स्वयं तथा दूसरे का मूल्यांकन करें।
   - उपर्युक्त पाठों को विद्यार्थियों की टोलियां के प्रस्तुतीकरण के माध्यम से कराना ताकि शिक्षण के दौरान ही मूल्यांकन भी हो जाए।
   - विद्यार्थियों की टोलियों को विभिन्न कार्य देना जैसे – सर्वे, लघु नाटिका, पोस्टर, प्रदर्शनी आदि।
   - समूहों में बांट कर एक-दूसरे को अध्याय के विभिन्न अंशु पर सवाल बनाकर प्रतियोगिता आयोजित करना।
   - किन्ही बिंदुओं पर अतिरिक्त सामग्री (पुस्तकें, नेट, अखबार इत्यादि) देखकर नोट से लेकर कक्षा में प्रस्तुत करना।
   - अपनी मातृभाषा में पाठ के विभिन्न अंशों के सारांश प्रस्तुत करना और एक-दूसरे के प्रस्तुति की समीक्षा करना।
   - इस तरह की अन्य गतिविधियाँ जो बच्चों के बौद्धिक विकास में सहायक हो अपनाई जा सकती है।

सामाजिक विज्ञान में आकलन-मूल्यांकन तथा विद्यार्थियों की उपलब्धियों के आकलन एवं मूल्यांकन के तरीके:

1. पाठ की मुख्य बातों का ध्यान रखना।
2. पाठ के मुख्य अवधारणाओं को समझना और उनका उपयोग करना
3. व्याख्या, तर्क, तुलना, उदाहरण, विश्लेषण, समालोचना आदि करना
4. मानचित्र, चित्र, तालिका रेखाचित्र आदि बनाना और प्रर्दशन करना।
5. पुस्तकों की बातों को अपने अनुभवों से जोड़कर देखना।
6. किसी अनुच्छेद की बातों को पढ़कर अपनी समझ और भाषा में व्यक्त करना।
7. विषय-वस्तु को अपने शब्दों में तथा अपनी प्रादेशिक, क्षेत्रीय या मातृभाषा में अभिव्यक्त करना।
8. विषय-वस्तु को नाटक, पोस्टर चित्र, रेखाचित्र आदि के माध्यम से व्यक्त करना।
9. नवीन ज्ञान का सृजन करना।

इस प्रकार हम कह सकते है कि सामाजिक विज्ञान में आकलन मूल्यांकन निरंतर चलने वाली वह प्रक्रिया है जो विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि की अपेक्षा उनके व्यक्तित्व के विकास में अधिक ध्यान रखता है।

इकाई–4.2

सीखने के संकेतकों की समझ (Understanding Learning Indicators)

संकेतक सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में वे महत्वपूर्ण बिंदु होते हैं, जिस के रास्ते चलकर हम किसी विषय वस्तु, घटना तथा शैक्षिक प्रक्रिया के उद्देश्य प्राप्ति करते हैं। जिस प्रकार किसी कार चालक को अपनी मंजिल तक पहुंचने में रास्ते में बने संकेत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ठीक उसी प्रकार शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में विद्यार्थी व शिक्षक शिक्षण के उद्देश्य प्राप्ति हेतु संकेतक की मदद लेते हैं। इस बिंदु में हम सीखने के संकेत और उसका महत्व एवं उनका उपयोग कक्षा शिक्षण में कैसे करेंगे पर चर्चा करेंगे।

वास्तव में संकेतक हम शिक्षकों के लिए विद्यार्थियों के प्रगति के मानदंड प्रदान करते हैं। सीखने की प्रक्रिया में संकेतक हमें यह बताते हैं कि विद्यार्थियों ने अभी तक कितना ज्ञान एवं कौशल अर्जित किया है। साथ–ही संकेतक हमें यह भी बताते हैं कि बच्चों की प्रगति की दिशा क्या है? संकेतक आकलन एवं मूल्यांकन के प्रति शिक्षक व विद्यालय के प्रति नजरिया प्रस्तुत करते हैं।

संकेतक हमें बच्चों के प्रगति के मानदण्ड प्रदान करते हैं। संकेतक हमें यह भी बताते हैं कि यह नजरिया स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार अपने मानदण्डों के निर्धारण को दर्शाता है।

शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया सही दिशा में चल रही है या नहीं, यह हमें संकेतक से पता चलता है। पूर्व में हम प्रकरण के आधार पर अपनी शिक्षण योजना बनाते रहे हैं। संकेतक प्रकरण का ही परिवर्धित रूप है। प्रकरण में अक्सर प्रक्रिया स्पष्ट नहीं होती है, जबकि संकेतक स्पष्ट रूप से प्रक्रियागत शिक्षण की बात करता है।

सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में संकेतक का क्या महत्व है?

सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में सीखने की निरन्तरता को ध्यान में रखते हुए बच्चों के सीखने की बेहतर समझ और उसे केन्द्र में रखने के लिए संकेतक अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

संकेतक बच्चों की सीखने की दक्षताओं का आकलन करने के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है।

संकेतक अभिभावकों, बच्चों और दूसरों के लिए भी बच्चों की प्रगति को आसान तरीके से समझने के लिए सन्दर्भ बिन्दु की तरह कार्य करते हैं।

संकेतक का निर्माण क्यों और कैसे करें?

संकेतक विकसित करते समय यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि हम किसी विशेष स्तर/आयु/कक्षा के सत्रान्त पर विद्यार्थियों में क्या प्रगति देखना चाहते हैं? इस प्रकार का दृष्टि, ऐसे संकेतक और अंततः ऐसे छात्र प्रोफाइल विकसित करने में सहायता प्रदान करेगा जो पाठयचर्या की रूपरेखा के अन्तर्गत पाठयक्रम के उद्देश्यों के अनुरूप होंगे। एक शिक्षक

में यह क्षमता होनी चाहिए कि वह बच्चे के अन्तर्निहित संभावनाओं की सराहना कर सकें।

विकसित किये गये संकेतक पाठ्यक्रमीय लक्ष्यों पर आधारित तथा एक-दूसरे से पूर्णतया पृथक रूप से पहचाने जाने चाहिए क्योंकि ये संकेतक कई बार एक कक्षा से लेकर अन्य कक्षाओं तक फैले होते हैं।

संकेतक का क्षेत्र केवल पाठ्यपुस्तकों व पाठ्यक्रम पर केन्द्रित नहीं होना चाहिए। वरन यह पाठ्यचर्या के विशेष उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए।

संकेतकों में शिक्षक द्वारा नियोजित किसी कार्य/गतिविधि पर बच्चे की बहुलतायुक्त प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

संकेतक का निर्माण बच्चे की अधिगम ग्रहण करने की सततता के रूप में समझते हुए करना चाहिए।

संकेतकों से यह पता चलना चाहिए कि अधिगम कार्य के सन्दर्भ में बच्चे कैसे प्रगति करते हैं।

संकेतकों के निर्माण करते समय बच्चे के अनुभवों, प्रश्नों एवं अभिव्यक्तियों, विचारों और संवादों को ध्यान में रखना चाहिए।

इकाई– 4.3

पाठ्य पुस्तकों में दिए गए गतिविधियों, प्रदत्त कार्यो एवं सवालों का विश्लेषण

बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षा का अटूट संबंध होता है। शिक्षा के माध्यम से बालक के ज्ञानात्मक विकास के साथ–साथ भावात्मक तथा मनोक्रियात्मक व्यवहार में भी परिवर्तन होता है। इन व्यवहार परिवर्तनों के पीछे एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका गतिविधियों तथा प्रदत्त कार्यो की होती है। गतिविधियों के माध्यम से बच्चे शिक्षा के दौरान अपने सीखे हुए ज्ञान को स्थाई तो करते ही हैं साथ–ही साथ पाठ्यपुस्तक विज्ञान को और बाहरी जीवन से जोड़ने में सक्षम हो जाते हैं। सामाजिक विज्ञान विषय जैसे व्यावहारिक विज्ञान में गतिविधियों की महत्ता और भी बढ़ जाती है।

उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों का सामाजिक विज्ञान के विभिन्न विषयों की पाठ्यपुस्तकों (हमारी दुनिया अतीत से वर्तमान तथा सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन) में निहित विभिन्न शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कई प्रकार की गतिविधियों व प्रदत्त कार्यो को संपादित करना पड़ता है। वास्तव में इन गतिविधियों प्रदत्त कार्यो के माध्यम से ही शिक्षक शिक्षार्थी के सभी क्षेत्रों के विकास के स्तर का आकलन करता है। इसकी मदद से शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण कर इसे और प्रभावशाली उपयोगी तथा वांछनीय बना पाता है।

गतिविधि एवं प्रदत्त कार्य का महत्व

गतिविधि एवं प्रदत्त कार्य के महत्व को निम्नवत बिंदुओं से समझा जा सकता है:-

1. बच्चों के सर्वांगीण विकास में सहायक होता है।
2. सैद्धांतिक ज्ञान का व्यवहारिक उपयोग होता है।
3. गतिविधि से प्राप्त ज्ञान स्थाई होता है।
4. बच्चों को कौशल विकास का अवसर प्राप्त होता है।
5. बच्चों में सृजनशीलता का विकास होता है।
6. बच्चों के शारीरिक मानसिक भावात्मक एवं मनो क्रियात्मक विकास का सुअवसर प्राप्त होता है।
7. बच्चे करके सीखने पर बल देते हैं।
8. विषय में रुचि तथा नवीन अभिरुचियों के विकास का अवसर प्राप्त होता है।
9. बच्चों में समस्याओं के समाधान के क्रम में चिंतन, तर्क, विश्लेषण जैसे उच्च स्तरीय योग्यताओं का विकास होता है।
10. बच्चों में संवैधानिक मूल्यों एवं नागरिक गुणों का विकास होता है।

सामाजिक विज्ञान में कुछ महत्वपूर्ण गतिविधियां एवं प्रदत्त कार्य

कोठारी कमीशन (1964 66), NCF-2005 तथा NEP-2020 का दस्तावेज भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को रोचक, सरस तथा प्रभावी बनाने के साथ–साथ गतिविधि आधारित शिक्षण हो इस बात पर बल देता है जिससे कि बच्चे करके सीखते हुए सृजीत ज्ञान को स्थाई कर सकें। हमारी दुनिया (भूगोल) एक गतिविधि आधारित विषय है। इसलिए कक्षा शिक्षण के दौरान भूगोल पर आधारित कुछ गतिविधियों को विद्यालय में करने का प्रयास किया गया जिनका विवरण प्रस्तुत है।

गतिविधि – 'दिन–रात का होना, मौसम परिवर्तन'

शुरुआत कुछ प्रश्नों से हुई जिसका मकसद बच्चों के पूर्व ज्ञान को जानना–समझना था। जिसमें दिशाएँ क्या होती हैं, कितनी होती हैं, हमें कैसे दिशाओं का ज्ञान होता है, परिभ्रमण और परिक्रमण क्या होता है इत्यादि। इसकी एक प्रश्नावली बच्चों कों दी गई।

परिक्रमण और परिभ्रमण में अन्तर

इसके लिए दो बच्चों को बुलाया गया। एक को हमने पृथ्वी माना और अपनी जगह पर घूमने के लिए कहा और दूसरे बच्चे को वैसे ही अपने अक्ष पर घूमने के साथ–साथ दूसरे बच्चे के इर्द–गिर्द घूमने के लिए कहा। इस प्रकार मन्दिर की परिक्रमा के उदाहरण को लेते हुए बच्चों को परिभ्रमण और परिक्रमण का मतलब तथा उनमे अन्तर बताया गया।

दिन रात के होने पर गतिविधि

इसके लिए शुरुआत में बच्चों से कुछ प्रश्न किए गए, जैसे –

हमें कैसे पता कि अभी दिन है ?

हमें कैसे पता कि कब रात होगी ?

दिन–रात कैसे होता होगा ?

इसके बाद बच्चों को ग्लोब और टॉर्च दिए गए। स्पष्ट किया गया कि मान लो यह टॉर्च एक सूर्य है और ग्लोब पृथ्वी। बच्चों ने यह गतिविधि करके देखी और समझ पाए कि किस तरह दिन–रात होता है। इसे तुनालका के टीचर कमलिया लाल ने भी करके देखा। उनका कहना था कि वह इतने सालों से भूगोल पढ़ा रहे हैं पर इस तरह के अभ्यास उन्होंने कभी नहीं करवाए। वह भी अब इस गतिविधि को बच्चों के साथ जारी रखना चाहेंगे।

ऋतु परिवर्तन

ऋतु परिवर्तन की शुरुआत भी कुछ प्रश्नों से की गई। इसके बाद बच्चों की सहायता से एक रस्सी लेकर एक दीर्घवृत्त बनवाया गया। जिसमें हमने दो बिन्दुओं को स्थिर रखा एवं धागे के बीच से उन दोनों बिन्दुओं के सापेक्ष घुमाया। इस प्रकार एक दीर्घवृत्त आकार एक आकृति बनाई गई। अब पृथ्वी की कक्षा प्राप्त हो गई थी। दोनों बिन्दुओं में से एक पर सूर्य (लैंप) रखा गया। इसके बाद ग्लोब को पृथ्वी की कक्षा पर अलग-अलग स्थिति में रखा गया जिससें वह स्पष्ट रूप से देख पाए कि कैसे सूर्य की किरण कभी कर्क रेखा पर कभी मकर रेखा पर सीधी गिरती है तथा पृथ्वी की सूर्य से दूरी हर दिन अलग-अलग होती है। इससे बच्चे बड़ा दिन, छोटा दिन, एवं दिन-रात बराबर, सर्दी-गर्मी कैसे होती है से सम्बन्धित अवधारणाओं को जान पाए। चित्र देखकर ज्यादा समझ में आएगा।

अतः कक्षा-शिक्षण में बच्चों के साथ किए गए कुछ सफल प्रयासों को इस रिपोर्ट के माध्यम से साझा करने का प्रयास किया गया है। बरहाल एक बात तो तय है कि शिक्षण प्रक्रिया बेहतर तभी होगी जब हम बच्चों को साथ कक्षा-कक्ष और पाठ्यपुस्तकों से इतर जाकर कुछ रचनात्मक करते हैं व करवाते हैं। तमाम शिक्षाविद् और अकादमिक दस्तावेज भी तो इसी पर जोर देते हैं।

इकाई–4.4

शिक्षण के दौरान पूछने योग्य सवालों की समझ

सीखने–सिखाने की औपचारिक प्रक्रिया शिक्षण है जो शिक्षक द्वारा विद्यार्थी की क्षमताओं का विकास कर उनके व्यवहार में परिवर्तन लाता है।शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन लाना है। विद्यार्थियों के व्यवहार परिवर्तन का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष आकलन– मूल्यांकन प्रश्नों की मदद से की जाती है।

प्रश्न

शिक्षण के दौरान पूछने योग्य सवालों की समझ

सीखने सिखाने की औपचारिक प्रक्रिया शिक्षण है जो शिक्षक द्वारा विद्यार्थी की क्षमताओं का विकास कर उनके व्यवहार में परिवर्तन लाता है। शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन लाना है। विद्यार्थियों के व्यवहार परिवर्तन का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष आकलन–मूल्यांकन प्रश्नों की मदद से भी की जाती है।

शिक्षक के द्वारा प्रश्न किया जानाः संसाधन एवं इसके उपयोग के बारे में बताएँ

बहुत से शिक्षक विद्यालय में अपने पाठ के दौरान ढेर सारे प्रश्न पूछते हैं। लेकिन इनमें से कितने प्रश्न विद्यार्थियों के चिंतन में महत्वपूर्ण सहायता देते हैं। दरअसल शिक्षक अक्सर कक्षा में अपना आधे से अधिक समय प्रश्न पूछने में लगाते हैं। बहुत से प्रश्नों के लिए केवल एक शब्द के उत्तर की आवश्यकता होती है और विद्यार्थियों को उत्तर देने के लिए बहुत कम समय दिया जाता है। अतः बहुत से विद्यार्थी पाठ से जुड़ने को लेकर उत्साहित नहीं होते हैं।

फिर भी विद्यार्थियों के चिंतन और भागीदारी को प्रेरित करने के लिए कक्षा में प्रश्नों का अनेक तरीकों का उपयोग किया जा सकता है और उसे ज्यादा प्रभावी तरीके से बनाया जा सकता है। यह इकाई प्रश्नों के ऐसे सर्वाधिक प्रभावी प्रकारों की पहचान करने पर ध्यान केंद्रित करती है। जिनका कि शिक्षक विद्यार्थियों के चिंतन को बढ़ावा देने और उनकी पढ़ाई को विस्तारित करने के लिए उपयोग कर सकते हैं। इसके अलावा यह आपको स्वयं अपने पाठों में भी इनमें से कुछ प्रविधियों और कौशलों को आजमाने का अवसर भी प्रदान करती है। संसाधन और उनके उपयोग गतिविधियों के जरिये आप इस बात का पता लगाएंगे कि किस प्रकार से प्रश्न विद्यार्थियों की गहन समझ को विकसित करने में मदद कर सकते हैं। प्रश्न पूछने के कौशलों को शिक्षण में वृद्धि करने के लिए सामाजिक विज्ञान के समस्त विषयों और अन्य विषयों में भी प्रयोग किया जा सकता है।

आप इस इकाई में क्या सीख सकते हैं एवं प्रश्न की क्या जरूरत है?

विद्यार्थियों के चिंतन और सीखने को प्रेरित करने के लिए आप विभिन्न प्रकार के प्रश्नों को पूछ सकते हैं।

विद्यार्थियों की समझ को विकसित करने के लिए सामाजिक विज्ञान के पाठों में प्रश्न पूछने की ज्यादा खुली प्रविधियों का उपयोग करने के नये तरीके और कौशल।

यह दृष्टिकोण क्यों महत्वपूर्ण है

शिक्षक के रूप में, विषय से सम्बन्धित और चुनौतीपूर्ण प्रश्नों को पूछने में सक्षम होना सीखना एक महत्वपूर्ण कौशल है, क्योंकि यह विद्यार्थियों के चिंतन को प्रेरित करता है और उनके उत्तर आपको उपयोगी जानकारी की एक श्रृंखला और उनके ज्ञान तथा वर्तमान विचारों की समझ प्रदान करता है। इस प्रकार शिक्षण प्रक्रिया के दौरान प्रश्न की महत्ता को निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट किया जा सकता है –

1. शिक्षक द्वारा विद्यार्थी के विषय-वस्तु से संबंधित ज्ञान को जानना।
2. विद्यार्थी के चिंतन व तर्क क्षमता को जानना।
3. विद्यार्थी की क्षमता को जानकार उसके समक्ष समस्या रखना।
4. विद्यार्थी के रुचि को जानकार उसे सही दिशा प्रदान करना।
5. बच्चे के ज्ञान व अनुभव को प्रोत्साहित करना।
6. उसे अधिगमकर्ता के रूप में समझना है।
7. उसकी रुचियों व जिज्ञासा को प्रेरित करना।
8. उसके चिंतन कौशल का विकास करना।
9. विद्यार्थी में आत्मसम्मान की भावना का विकास करना।
10. विद्यार्थी के विकास में सतत् रूप से सहयोग प्रदान करना।

शिक्षण के दौरान पूछने योग्य सवाल कैसे हों?

शिक्षण के दौरान पूछने योग्य सवाल निम्न होने चाहिए:-

1. विषय-वस्तु की प्रकृति व उद्देश्य के अनुरूप होनी चाहिए।
2. विद्यार्थियों की उम्र कक्षा तथा मानसिक स्तर के सापेक्ष होने चाहिए।
3. बच्चों के मनोवैज्ञानिक स्तर रुचियां, अभिवृत्तियों के अनुरूप हो।
4. विद्यार्थी के जिज्ञासा को बढ़ाने वाला हो।
5. पुस्तकीय ज्ञान को बाहरी ज्ञान से जोड़ने वाला हो।
6. प्रश्न व्यवहारिक और औसत कठिनाई अस्तर का हो।
7. जीवन से संबंध स्थापित करने वाला हो।
8. उद्देश्य परक के साथ-साथ वैयक्तिक भिन्नता के अनुरूप हो।
9. विद्यार्थियों के ज्ञान, बोध एवं अनुप्रयोग को बढ़ाने वाला हो।
10. संज्ञानात्मक तथा सह-संज्ञानात्मक दोनों ही क्षेत्रों से हो।

11. विद्यार्थियों के बीच सकारात्मक संवाद वाला होना चाहिए।
12. बंद प्रकृति के बजाय खुले व्याख्यात्मक प्रकृति के प्रश्न अधिक होने चाहिए।
13. प्रश्न अधिगम संकेतक के तौर पर हो।
14. विद्यार्थियों को स्वयं से प्रश्न पूछने पर प्रोत्साहित करें।

इस प्रकार नियोजित और उदेश्य सहित तरीके से अच्छे प्रश्नों को पूछने से विद्यार्थियों की उपलब्धि में महत्वपूर्ण अंतर आएगा। प्रश्नों का उपयोग विद्यार्थियों को उनके विचारों, उनकी समझदारी और उनकी प्रगति के बारे में फीडबैक प्रदान करने के लिए किया जा सकता है। अधिकतर विद्यार्थी इस प्रकार की जानकारी को प्राप्त करने में उत्साह दिखाते हैं, विशेष रूप से तब, जबकि यह सकारात्मक और रचनात्मक तरीके से प्रदान की गयी हो। यह उनकी प्रगति को मापने में मदद करती है और उनमें आत्म-विश्वास का संचार करती है।

पाठ योजना बनाते समय महत्वपूर्ण काम यह होता है कि आप उन प्रश्नों के बारे में स्पष्ट हो जाएं जिसका कि आप शिक्षण के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपयोग कर सकते हैं। विद्यार्थियों में संसाधन की अवधारणा को विकसित करना तथा इसके भिन्न-भिन्न प्रकार बताना आसान काम नहीं है।

ऐसे प्रश्न पूछना महत्वपूर्ण है जिससे विद्यार्थी सिद्धान्त और अपने अनुभव को जोड़ते हुए खोज कर सके और स्वयं अपेक्षित हल को निकाल कर संसाधन विषय में गहन समझ विकसित कर सकें। ऐसा करने के लिए आपको प्रश्न पूछने के कौशलों का रचनात्मक और गतिशील तरीकों से उपयोग करने में सक्षम होना चाहिए, ताकि विद्यार्थी सोचने के लिए प्रोत्साहित हों।

केस स्टडी 1: यहां उदाहरण देना है

शिक्षक के रूप में आपकी भूमिका यह बनती है कि आप अपने विद्यार्थियों में संसाधनों की समझ को क्रमिक रूप से विकसित करने में मदद करें। ऐसा करने के लिए आपको उनके विचारों की पड़ताल करनी होती है।

सामाजिक विज्ञान के उस पाठ के बारे में सोचें, जिसे कि आपने सप्ताह के दौरान पढ़ाया था और उस पर विस्तार से विचार किए तथा अपने विद्यार्थियों से कहा था कि अगर आप कर सकें तो अपने द्वारा पूछे गये सभी प्रश्नों की सूची बनाएं। उन्हें बिल्कुल भी नहीं बदलें। चाहे आपकी सूची जितनी भी छोटी हो अब उसे देखें, तथा इस बारे में सोचें कि इन प्रश्नों के बारे में सीखने में आपके विद्यार्थियों की कितनी मदद की है कि आप पाठ के दौरान क्या कर रहे थे? और किस बारे में बात कर रहे थे।

आपके कितने प्रश्न हाँ या नहीं के उत्तरों से संबद्ध थे? कितने संभावित उत्तरों के बारे में सोचने? और या समस्या को हल करने के लिए विद्यार्थियों के समय लगाने से संबद्ध थे? (इन्हें प्राय: 'खुले सिरों वाला' प्रश्न कहा जाता है।)

क्या आप याद कर सकते हैं कि विद्यार्थियों ने किस प्रकार से विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का जवाब दिया था? किसने उत्तर दिया था? क्या यह हमेशा वही विद्यार्थी होता है? आपकी समझ में ऐसा क्यों होता है?

किसी विद्यार्थी को उत्तर देने के लिए कहने से पूर्व क्या आप विद्यार्थियों को सोचने के लिए समय प्रदान करते हैं?

ऊपर दिये गये प्रश्नों के उत्तर में अपनी कक्षाओं में प्रश्न पूछने के अपने उपयोग के बारे में कुछ टिप्पणियां तैयार करें। अपनी टिप्पणियों पर पूरी तरह से गौर करें और प्रश्न पूछने के स्वयं के कौशलों का आकलन करें। आपकी शक्तियां कहां पर निहित हैं? इसे तय करें और आगे पढ़ने से पहले इस बारे में सोचें कि आप किन कौशलों को बेहतर और विस्तारित बना सकते हैं और बनाना चाहेंगे। याद रखें कि शिक्षक के रूप में आपकी भूमिका संसाधन के बारे में समझ विकसित करने और उसके बारे में सीखने में विद्यार्थियों की मदद करना है। ऐसा करने के लिए आपको उनके वर्तमान विचारों को चुनौती देने तथा इस बात का पता लगाने की जरूरत होती है कि वे कितनी अच्छी तरह से तैयार हैं।

इकाई–4.5

सामाजिक विज्ञान में बच्चों के आकलन मूल्यांकन के विविध तरीकों की समझ

आकलन के द्वारा विद्यार्थियों के विभिन्न व्यवहारों, योग्यताओं क्षमताओं, गुणों आदि के साथ साथ उनके शैक्षिक विकास का गुणात्मक वर्णन किया जाता है जबकि मूल्यांकन के द्वारा विद्यार्थियों के शैक्षिक विकास की मान्यता को सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक विज्ञान विषय में विद्यार्थियों के इन व्यवहारों योग्यताओं क्षमताओं गुणों आदि का आकलन करने तथा शैक्षिक विकास का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न प्रकार की तकनीकों एवं उपकरणों की आवश्यकता होती है इन्हें आकलन एवं मूल्यांकन के उपकरण एवं तकनीक के नाम से जाना जाता है। बच्चों के सर्वागीण विकास हेतु बहुआयामी पक्षों को यथा ज्ञानात्मक भावात्मक एवं मनोक्रियात्मक व्यवहार का आकलन करने हेतु समय, संदर्भ और परिस्थिति के अनुसार एक से अधिक तरीकों की जरूरत पढ़ती है।

आकलन एवं मूल्यांकन की विभिन्न तरीकें

1. **अवलोकन प्रविधि (Observation Techniques)** – किसी विद्यार्थी के व्यवहार को देखकर या अवलोकित करके उसके व्यवहार का आकलन करने की प्रविधि है।

अवलोकन को व्यवस्थित एवं औपचारिक बनाने हेतु चेक लिस्ट, अवलोकन चार्ट मापनी परीक्षण आदि की सहायता ली जाती है।

2. **स्व–आख्या (प्रतिवेदन) तकनीक (Self & Report Techniques)** – बच्चे के द्वारा दी गई स्वयं की सूचना के आधार पर उसके व्यवहार के संबंध में जानकारी या किसी गुण की उपस्थिति का पता लगाना स्व–आख्या तकनीक है। इसे भी व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने के दृष्टिकोण से प्रश्नावली, साक्षात्कार अभिवृत्ति मापनी आदि उपकरणों का उपयोग किया जाता है।
3. **परीक्षण तकनीक (Testing Techniques)** – परीक्षण की सहायता से विद्यार्थियों की विभिन्न शैक्षिक योग्यताओं तथा गुणों का आकलन किया जाता है। शैक्षिक संदर्भ में परीक्षण द्वारा प्राय: ज्ञानात्मक व्यवहार का मापन होता है। परीक्षण तकनीक में व्यक्ति को ऐसी परिस्थिति में रखा जाता है जो उसके वास्तविक व्यवहार या गुणों को प्रकट कर दें। बालक के अलग–अलग गुणों के आकलन हेतु भिन्न–भिन्न परीक्षण, यथा – संप्राप्ति परीक्षण, बुद्धि परीक्षण, निदानात्मक परीक्षण, अभिरुचि परीक्षण, मूल्य परीक्षण प्रशासित किया जाता है।
4. **समाजमितीय तकनीक (Sociomitric Techniques)** – विद्यार्थी के सामाजिक गुणों, संबंधों समायोजन तथा उनके बीच अंत:क्रिया के आकलन हेतु उपर्युक्त तकनीक है। सामाजिक गतिशीलता की मापन हेतु भी यह सर्वोत्तम तकनीक के रूप में प्रयुक्त की जाती रही है।
5. **प्रक्षेपी तकनीक (Projective Techniques)** – इस प्रविधि में बालक के सम्मुख किसी और असंरचित उद्दीपन को प्रस्तुत किया जाता है तथा बालक उस पर अपनी प्रतिक्रिया देता है। उसके द्वारा दी गई प्रतिक्रिया के आधार पर विश्लेषण कर उसकी पसंद, विचार, दृष्टिकोण, आवश्यकता आदि गुणों को जाना जा सकता है। इसकी मदद से बच्चों के अचेतन मन की बातों को जाना जाता है। रोशा का इंक ब्लॉट परीक्षण, शब्द साहचर्य परीक्षण, पूर्ति परीक्षण आदि।
6. **प्रश्नावली (Questionnaire)** – विद्यार्थियों से उनकी स्वयं की रुचियां एवं अभिवृत्तियों के विकास से संबंधित सूचनाएं प्राप्त करने के लिए यह विधि बहुतायत प्रयुक्त की जाती है।
7. **क्रम–निर्धारण मापनी (Rating Scale)** – निर्धारण मापनी की सहायता से बच्चे की विभिन्न विशेषताओं व गुणों की मात्रा का निर्धारण किया जा सकता है।
8. **साक्षात्कार (Interview)** – सूचना संकलन करने का यह सर्वाधिक प्रचलित साधन रहा है। साक्षात्कार की प्रक्रिया प्राय: व्यक्ति से आमने–सामने बैठकर विभिन्न प्रश्न के प्रत्युत्तर के आधार पर उसकी योग्यताओं का मापन किया जाता है। शैक्षिक संस्थाओं में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मापन करने के लिए किया जाने वाला साक्षात्कार मौखिकी (Viva) के नाम से भी जाना जाता है। इसके द्वारा

रुचियों के विकास, दृष्टिकोण में हुए परिवर्तनों तथा विभिन्न व्यक्तिगत विशेषताओं की जांच की जाती है।

समेकन

इस इकाई में हमने जाना कि आकलन एवं मूल्यांकन सीखने-सीखाने की प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग होता है। आकलन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें छात्र अपने शैक्षिक अनुभवों के परिणाम स्वरूप अपने ज्ञान के बारे में समझते हैं। आकलन एवं मूल्यांकन गहरी समझ विकसित करने के लिए विविध स्रोतों से जानकारी एकत्र करने की प्रक्रिया है। इसके आधार पर मूल्यांकन कार्य संपन्न किया जाता है। आकलन के द्वारा छात्रों के विभिन्न व्यवहारों, योग्यताओं, क्षमताओं, गुणों आदि के साथ-साथ उनके शैक्षिक विकास का गुणात्मक व्याख्या किया जाता है जबकि इसी आकलन के आधार पर मूल्यांकन का कार्य भी किया जाता है। आकलन व मूल्यांकन के लिए विभिन्न उपर्युक्त मापन उपकरणों का उपयोग किया जाता है।

इस प्रकार आकलन-मूल्यांकन सीखने-सीखाने की प्रक्रिया का हृदय स्थली होता है।

मूल्यांकन के प्रश्न

1. आकलन एवं मूल्यांकन से क्या समझते हैं?
2. इसके उद्देश्य एवं महत्व का सीखने-सीखाने का प्रक्रिया में संकेतक का क्या महत्व है?
3. प्रदत्त कार्यों के महत्वों की विवेचना करें।
4. आकलन एवं मूल्यांकन के विविध तरीकों की व्याख्या करें।

संदर्भ सूची

1. एस.के. कोहलर, सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, 1984 प्रथम संस्करण।
2. वाई.के.सिंह, सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, 2008.
3. एस.सी.ई.आर.टी. विद्यालय और शिक्षा नीति स्व-अधिगम सामग्री (ओडीएल) संस्करण, 2017
4. एस.एस.सी.ई.आर.टी. (2008) बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2008, पटना, एस.सी. ई.आर.टी.
5. एन.सी.ई.आर.टी. (2005), राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005, नई दिल्ली।
6. भारत सरकार, (1986), राष्ट्रीय शिक्षा नीति, नई दिल्ली, मानव संसाधन विकास विभाग।
7. बिहार सरकार, (1991) 1 से 5 तक स्वीकृत पाठ्यक्रम, पटना: मानव संसाधन विकास विभाग।
8. भारत सरकार (1985), शिक्षक आयोग, नई दिल्ली।
9. भारत सरकार (2009), शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009, नई दिल्ली मानव संसाधन विकास विभाग।
10. एस.सी.ई.आर.टी. (2017), विद्यालय और शिक्षा नीति, प्रथम सत्र, (ओ.डी.एल.)।
11. एन.सी.टी.ई. (2010), नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर टीचर एजुकेशन, न्यू दिल्ली।
12. वर्मा डॉ0 मनोज कुमार (2017), बाल्यावस्था एवं उसका विकास, नवदीप प्रकाशन, पटना।
13. नालन्दा खुला विश्वविद्यालय, पटना (2017), शिक्षा, विद्यालय और समाज, प्रथम-पत्र, प्रथम वर्ष।